बापू की मीठी-मीठी बातें

(मूल मराठी पुस्तक 'बापूजींच्या गोड गोष्टी' का रूपान्तर)

पहला भाग

साने गुरुजी

ISBN 978-93-83982-68-4

सौजन्य: सर्व सेवा संघ-प्रकाशन

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी- 221 001

Email-sarvodayavns@yahoo.co.in

प्रकाशकीय

'बापू की मीठी-मीठी बातें' नामक यह पुस्तक मराठी के कोमल-करुण-कलम के धनी स्व. साने गुरुजी की रचना है। साने गुरुजी का नाम मराठी-क्षेत्र में प्रयेक बालक और किशोर की जबान पर है। बालक का हृदय उनकी रचना में इतना समरस हो जाता है कि भीतर की तरलता आँखों की राह झर-झर नि:सृत होने लगती है। उनके शब्द भावों का अनुगमन करते हुए चले चलते हैं।

बापूजी (महात्मा गांधी) के जीवन के कुछ मधुर-मीठे प्रसंगों को बालकों के लाभार्थ साने गुरुजी ने अपना शब्द-माधुर्य प्रदान किया है। ये घटनाएँ बड़ी ही प्रेरक और उद्बोधक हैं। पुस्तक में कुल मिलाकर ५८ प्रसंग दिये गये हैं। इसका दूसरा भाग भी प्रकाशित हो गया है।

साने गुरुजी बालकों के सुहृद् तो थे ही, बाल-हृदय भी थे। उनकी यह प्रसादी बालकों को सचमुच मीठी-मीठी लगेगी।

सर्व सेवा संघ-प्रकाशन ने पहली बार हिन्दी में गुरुजी की यह रचना प्रकाशित की थी जिसका हिन्दी जगत के पाठकों ने हृदय से स्वागत किया। इसी वजह से इस पुस्तक का बारहवाँ संस्करण प्रकाशित करते हुए हमें प्रसन्नता हो रही है।

- प्रकाशक

.

अनुक्रम

खण्ड – १ : बच्चों के बापू

१. प्यारे बापू
२. अन्धकार में प्रकाश
३. 'गांधीजी पागल हैं'
४. महापुरुष की महानता
५. राष्ट्र का पिता

खण्ड – २ : राष्ट्रपिता

६. बापू की महानता
७. परावलम्बन नंगापन है
८. मन की एकाग्रता की शक्ति
९. गुरुदेव और बापू
१०. बरबादी की वेदना
११. निराश्रित होने का आनन्द
१२. साइकिल की सवारी
१३. प्रेम का उपहार
१४. तभी तो दीनबन्धु हो
१५. पहरेवाला भी रो पड़ा
१६. एक राष्ट्र का प्रतिनिधि
१७. पुन्नीलाल नाई
१८. यन्त्रों की मर्यादा
१९. नव-जीवन का सन्देश
२०. राष्ट्र-नेता और उसका वारिस

खण्ड - ३ : विनम्र सेवक

२१. शरीर सेवा का साधन है

२२. महात्मा का दुःख
२३. देह समाज की धरोहर है
२४. 'गांधी मर गया'
२५. करुणामूर्ति
२६. सेवापरायण बापू
२७. बापू धोबी बने
२८. दरिद्रनारायण का उपासक
२९. बे-घर बापू
३०. मसहरी कितनों को मिलती है ?
३१. फिजूलखर्ची का भय
३२. कुर्ता क्यों नहीं पहनते ?

खण्ड - ४ : सत्याग्रही

३३. गहरा आघात
३४. भूल का अनोखा प्रायश्चित
३५. बापू की उदारता
३६. भूल कबूलने की हिम्मत
३७. वज्र से कठोर
३८. वचन-पालन
३९. सफाई : ज्ञान का पहला पाठ
४०. बुद्ध का अवतार
४१. चरखे के व्यामोहक डर
४२. दुर्बलता का लाभ उठाना पाप है
४३. नमक ही अलोना हो जाय तो ?
४४. गुण-दर्शन का नमूना
४५. सादगी और साबुन
४६. गफलत खतरनाक है

४७. नम्रता ने ही चकमा दिया

खण्ड – ५ : ज्योति-पुरुष

४८. शोषण का पाप

४९. बापू की छटपटाहट

५०. प्रेम बनाम आदर

५१. माँ की सिखावन

५२. पवित्र मनुष्य

५३. श्रद्धा का परिणाम

५४. ध्येय-निष्ठा और अलिप्तता

५५. 'श्रद्धा चाहिए'

५६. अन्धविश्वास पर कुल्हाड़ी

५७. मरण का आनन्द मनाओ

५८. राम-नाम की महिमा

बापू की

मीठी-मीठी बातें

मेरा हमेशा यह ख्याल रहा है कि मैं मुसलमानों को ज्यादा अच्छा मुसलमान, हिन्दुओं को ज्यादा अच्छा हिन्दू, इंसाइयों को ज्यादा अच्छा ईसाई और पारसियों को ज्यादा अच्छा पारसी बनाऊँ।

-गांधीजी

खण्ड - १

बच्चों के बापू

१. प्यारे बापू

छोटा बालक आनन्दस्वरूप है, संसार की आशा है, निर्मलता है, उत्साह है । मुक्त पुरुषों में एक प्रकार की बाल-वृत्ति होती है। महात्मा गांधी बालकों की तरह निष्पाप थे। इसलिए बापू की मीठी बातों का प्रारम्भ बालकों की कहानी से ही करनेवाला हूँ ।

महात्माजी को बच्चे बहुत प्यारे थे । संसार के सभी धर्मात्मा ऐसे ही हैं । उन्हें बालकों पर बहुत प्रेम होता है । पैगम्बर मुहम्मद को रास्ते में बालक घेर लेते थे । उन्हें एक ओर खींच ले जाते और कहते : "कहानी सुनाओ ।" ईसामसीह भी बच्चों के बड़े प्यारे थे । और हमारे भगवान् गोपाल-कृष्ण ! वे तो गोपाल-बालकों में खेला ही करते थे । महात्माजी भी बालकों के पीछे पागल थे । घूमने-टहलने जाते तो बच्चों को साथ ले जाते । जुहू (बम्बई) के समुद्र-किनारे बच्चों की लाठी पकड़कर हँसते हुए महात्माजी का चित्र तुमने देखा ही होगा । लेकिन आज जो कहानी सुनानेवाला हूँ, वह साबरमती-आश्रम की है ।

रोज की तरह गांधीजी आश्रम में घूमने निकले । आश्रम के बच्चे भी निकले । हँसते-बोलते टहलना शुरू हुआ । टहलते समय बापूजी के साथ प्रश्नोत्तर चलता ही रहता था ।

"बापू, आपसे एक बात पूछूँ?" एक बच्चे ने प्रश्न किया ।

"हाँ-हाँ, पूछो ।"

"अहिंसा का मतलब यही न कि दूसरे को दुःख न दें?"

"बिलकुल ठीक !"

“आप हँसते-हँसते हमारा गाल चुटकी में पकड़ते हैं, यह हिंसा है कि अहिंसा ?”

“शैतान कहीं का !” कहकर खिलखिलाकर हँसते हुए बापू ने उसके गाल की जोर से चिकोटी काटी । बच्चे ताली बजा-बजाकर ‘बापूजी चिढ़ गये, बापूजी चिढ़ गये’ कहते हुए हँसने लगे । महापुरुष भी उस हास्यरस में रम गया ।

२. अन्धकार में प्रकाश

उन दिनों बापू की यात्रा नोआखाली में चल रही थी । वहाँ की जनता के आँसू पोंछने और ढाढ़स बँधाने के लिए गांधीजी वहाँ गये थे । हर जगह भय का वातावरण छाया था । हिन्दू घर से बाहर नहीं निकलते थे । धर्म के नाम पर अधर्म का काम हो रहा था । उस अन्धकार में प्रकाश दिखाने, उस भय में अभय देने राष्ट्रपिता निकला । गांधीजी ने जी-तोड़ कोशिश की, लेकिन लोग बाहर निकलने की हिम्मत नहीं कर पाते थे । गांधीजी को थोड़ी देर के लिए निराशा हुई ।

एक दिन उनके साथियों ने एक उपाय निकाला । वे गेंद वगैरह का खेल सड़क पर खेलने लगे । घरों से बच्चे झाँककर देखते थे ।

“आओ बच्चों, खेल खेलने आओ । बापू के साथ खेलने आओ ।” इस तरह बापूजी के साथी कहने लगे और वे बच्चे आने लगे । खेल बच्चों की आत्मा होती है । वे खेल में रमने लगे । भागने-दौड़ने लगे । हँसने-खेलने लगे ।

फिर एक दिन वहाँ तिरंगा झण्डा फहराया गया ।

बापू के साथी बोले : “आओ, झण्डे का गीत गायें ।”

फिर ‘झण्डा ऊँचा रहे हमारा’ गाया गया।

“अब 'रघुपति राघव राजाराम' गाते चलो हमारे साथ । चलोगे न ?”

“जी हाँ, चलिये ।”

जुलूस निकला । बच्चे ‘रघुपति राघव राजाराम’ गाते हुए आगे बढ़ते गये। बच्चों के पीछे घरों से झाँकनेवाले माता-पिता भी बाहर निकले । धर्मान्ध मुसलमान कहने लगे । “देखेंगे ये लोग कैसे राम-नाम लेते हैं ?” लेकिन वह बालकों का जुलूस, राम की वायर-सेना का जुलूस देखकर मुसलमान दंग रह गये । जयघोष करते हुए आगे बढ़ने वाले उस जुलूस की ओर देखते ही रह गये । मारने के लिए हाथ ऊपर उठे नहीं । क्या उनका भी हृदय उछलने लगा होगा ? बाल-बच्चों को अपार प्रेम करनेवाले पैगम्बर मुहम्मद क्या उनके हृदय में भी जग पड़े ?

उस दिन कभी न निकलनेवाले आँसू गांधीजी के नयनों से निकल पड़े । उन्होंने कहा : “आज अन्धकार में प्रकाश दिखा । मुझे आशा मिली । निष्पाप बालकों की श्रद्धा का यह बल है।”

विनोबाजी 'बाल' शब्द की यह जो व्याख्या करते हैं कि जिसमें बल है, वह 'बाल' है । यह यों ही नहीं है । प्रह्लाद, ध्रुव, चिलया, रोहिंदास इत्यादि भारतीय बालकों की कितनी महिमा है !

३. ‘गांधीजी पागल हैं’

आज एक छोटे बच्चे की ही कहानी सुनाता हूँ । क्योंकि छोटे बच्चे यानी ईश्वर का रूप । उनका मन निर्मल और हृदय पवित्र होता है । बापू को छोटे बच्चे बहुत प्रिय थे ।

एक बार बापूजी भोजन कर रहे थे । वे तो हिसाब से खाते थे । भोजन में पाँच चीजों से ज्यादा नहीं लेते थे । उस दिन किसी ने अंगूर आदि का उपहार ला दिया था । उपहार में आये फल सबके बीच बाँट दिये जाते थे । सेवाग्राम में बापू रहते, तब उपकार के फल पहले बीमारों को मिलते थे ।

गांधीजी खाना खा रहे थे । फल खा रहे थे । इतने में कुछ लोग मिलने आये । वह एक प्रेमल परिवार था । माता, पिता, छोटा बच्चा, सब थे । गांधीजी को प्रणाम कर सब बैठ गये । छोटे बच्चे ने बापूजी की ओर देखा । माँ से कुछ कहने लगा । माँ उसे चुप कर रही थी ।

वह बच्चा कह रहा था : "गांधीजी पागल हैं।"

माँ गुस्से से बोली : "ऐसा नहीं बोलते ! चुप ।"

उसने फिर कहा : "हाँ, पागल ही हैं ।"

माँ गुस्से से डाँट रही थी: "दो थप्पड़ लगाऊँगी ।"

गांधीजी का ध्यान उधर गया । अपने ऐनक के अन्दर से हँसते हुए देखा । पूछा : "क्या कहता है यह ? क्यों रे मुन्ने ?"

उसने कहा : "आप पागल हैं ।"

माता, पिता का और दूसरों का मुँह सूखने लगा । लेकिन वह राष्ट्रपिता जोर से हँस पड़ा ।

बापू ने हँसते-हँसते पूछा । "मैं क्योंकर पागल हूँ ? बताओ तो ?"

"आप अकेले-अकेले खाते हैं । किसी को नहीं देते । माँ ने एक बार मुझसे कहा था, 'तू अकेला खाता है, कैसा पागल है । दे उस लड़के को भी ।' और आप तो अकेले ही खा रहे हैं, इसलिए पागल हैं ।"

"हाँ, यह सच है । ले, तू भी यह फल ले । अब तो मैं सयाना हूँ न ?"

"जाओ; मुझे नहीं चाहिए ।"

"क्यों भला ?"

"माँ कहती है, दूसरों का दिया नहीं लेना चाहिए ।"

"अरे, फौरन नहीं लेना चाहिए । लेकिन आग्रह करें तो लेना चाहिए । ले ।"

माता, पिता के कहने पर उसने फल ले लिये । सब हँसने लगे । है न मजेदार कहानी ?

४. महापुरुष की महानता

सन् १९३० के प्रचण्ड दिन थे । अभी सत्याग्रह शुरू नहीं हुआ था । अभी वह महान् दाण्डी-कूच शुरू नहीं हुआ था । देश में सब जगह कुतूहल से भरा हुआ वातावरण था । २६ जनवरी को पहला स्वातन्त्रय-दिवस मनाया गया था । जनता का सारा ध्यान इस ओर था कि गांधीजी क्या आदेश देते हैं, किस तरह का सत्याग्रह करने को कहते हैं । जगह-जगह शिविर हो रहे थे । स्वयंसेवक आने लगे थे । गांधीजी ने कहा : "नमक का सत्याग्रह हो, लेकिन मेरे कहे बगैर नहीं करना है । पहले में दाण्डी जाऊँगा, वहाँ सत्याग्रह करूँगा, फिर सब जगह करना ।"

महात्माजी एक महत्त्वपूर्ण पत्र लिख रहे हैं । ऐतिहासिक पत्र, देश का भविष्य निश्चित करनेवाला पत्र लिख रहे हैं । वह किसे लिख रहे हैं ? क्या दिल्ली के लाटसाहब को, वाइसराय साहब को ?

पत्र पूरा हुआ । लगे हाथ दूसरा एक पत्र उन्होंने लिखने के लिए लिया । यह किसे लिखना है ? क्या इंग्लैण्ड के प्रधानमंत्री को ? अमरीका के अध्यक्ष को ? किसको लिखा जा रहा है यह पत्र ? क्या उस समय के कांग्रेस-अध्यक्ष को ? पण्डित जवाहरलाल नेहरू को ? या रवीन्द्रनाथ ठाकुर को, जो हाल ही में आश्रम आकर यह पूछकर गये थे कि सत्याग्रह का मार्ग मिला ? किसे लिख रहे थे ?

वह पत्र था एक हरिजन बालिका के नाम । वह वहाँ से ५०० मील दूर रहती थी । उसे वह प्रेमल पत्र लिखा जा रहा था ।

उस पत्र में राष्ट्रपिता उस बच्ची को वात्सल्यपूर्ण सूचना दे रहे थे – "तेरी अँगुली दुख रही है। लेकिन उसमें आयोडीन लगा रही है न ? लगाती रहना।" एक ओर आँखों के सामने राष्ट्रव्यापी आन्दोलन और दूसरी ओर दूर की उस बच्ची को प्यारभरा पत्र। महापुरुष के लिए सब समान है।

५. राष्ट्र का पिता

उन दिनों गांधीजी महाबलेश्वर में थे। रोज की तरह वे शाम को घूमने निकले। पास के गाँव का १०-१२ वर्ष का बच्चा रास्ते के किनारे पर हाथ जोड़कर खड़ा था। कमर में केवल एक मैली लँगोटी थी। कन्धे पर एक मैला-कुचैला चिथड़ा था। स्नान भी शायद कई दिन से नहीं किया था। गांधीजी ने अपने एक साथी से कहा : "उससे उसका वह कपड़ा माँग लो। कहना, कल ला देंगे।

वह लड़का दे नहीं रहा था।

"कल यहीं आओगे तो मिठाई देंगे" – ऐसा उसे कहने के लिए बताकर गांधीजी आगे निकल गये।

दूसरे दिन घूमने निकलने का समय हुआ। गांधीजी ने प्यारेलालजी से कुछ खादी के कपड़े, खाने की चीज और साबुन-बार साथ में ले चलने को कहा।

वहीं वह लड़का मिला। बापू ने उसे पास बुलाकर प्यार किया और कहा : "नहा-धोकर कल साफ कपड़े पहनकर आना। और भी खाने की चीज देंगे।"

और बाद में रोज गांधीजी की राह देखते हुए, साफ कपड़े पहनकर, हाथ जोड़े वह लड़का और दूसरे भी बच्चे वहाँ खड़े रहते थे।

गांधीजी सचमुच राष्ट्रपिता थे।

खण्ड - २

राष्ट्रपिता

६. बापू की महानता

गांधीजी अखण्ड कर्मयोगी थे । उनका एक-एक क्षण सेवा में बीतता था । देश के लिए इस तरह सतत खपनेवाला महात्मा दूसरा नहीं देखा-सुना । लेकिन महात्माजी को कर्म में आसक्ति नहीं थी । कर्म को वे सिर पर चढ़ने नहीं देते थे । कर्म के लिए आडम्बर नहीं रचते थे ।

उन दिनों बोरसद तहसील में प्लेग फैला हुआ था । सरदार और उनके साथी सेवक बोरसद दौड़े । सफाई का आन्दोलन शुरू हुआ । चूहे मारे जाने लगे । लेकिन अहिंसा के नाम पर लोग चूहे मारने को तैयार नहीं हो रहे थे । सरदार ने महात्माजी को लिखा : "लोगों से आप कहें कि वे चूहे मारें, वरना लोग मरने लगेंगे ।"

महात्माजी ने लिखा : "छोटे-से मच्छर को भी मेरे ही समान जीने का हक है । लेकिन मानव का जीवन अपूर्ण है । होना तो यह चाहिए कि मच्छर होने ही न दें, घर में चूहे आयें ही नहीं । मैं क्या कहूँ चूहों को मारना चाहिए !"

महात्माजी लिखकर ही चुप नहीं रहे । स्वयं बोरसद के शिविर में जा दाखिल हुए । चूहे मारने के आन्दोलन में तेजी आयी । प्लेग दूर होने लगा । कभी-कभी महात्माजी और सरदार साथ-साथ घूमने जाते । एक बार गांधीजी हँसते हुए सरदार से बोले : "मेरी और तुम्हारी भेंट न हुई होती, तो तुम जाने कहाँ बहते चले गये होते ?" यों दिन बीतने लगे ।

एक दिन सरदार वगैरह सभी लोग काम पर जाने लगे । गांधीजी ने कहा : "आप सब जा रहे हैं तो मुझे कुछ काम दे जाओ ।"

"आप हमें आशीर्वाद देने के लिए यहीं रहें । यही आपका काम है ।"

“खाली बैठे क्या करूँ ? मुझे एक बाजे का खिलौना ही ला दो तो बजाता बैठा रहूँगा ।” सब हँस पड़े और चले गये ।

काम का पहाड़ उठा लेनेवाले बापू विनोद में बाजे का खिलौना बजाने को भी तैयार थे । यह थी उनकी बाल-वृत्ति ।

७. परावलम्बन नंगापन है

गांधीजी ने स्वदेशी का अर्थ व्यापक किया था । बंग-भंग के समय ‘स्वदेशी’ का मंत्र प्रकट हुआ । लेकिन महाराष्ट्र में सार्वजनिक काका ने उससे २५-३० वर्ष पहले उसका नारा लगाया था । विदेशी मिल के कपड़ों के बजाय देशी मिलों का कपड़ा पहनना स्वेदशी है । लेकिन गांधीजी ने कहा कि यहाँ की मिल के बने कपड़ों के बजाय गाँव के लोगों की बनायी हुई खादी पहनना अधिक स्वदेशी है, सौ प्रतिशत स्वदेशी है । जिस चीज से देहाती लोगों के हाथों में अधिक पैसा जायेगा, वह अधिक स्वेदशी । देशी शक्कर खाना अच्छा है । लेकिन गुड़ खाकर देहात में अधिक पैसा बचता हो, तो गुड़ खाना अधिक स्वेदशी है । महात्माजी ने 'स्वदेशी' में अधिक अर्थ भर दिया। शब्दों के अर्थ युग-युग से बढ़ते जाते हैं । पहले हम 'स्वतंत्रता' का नाम लेते थे । स्वतंत्रता यानी विदेशी सत्ता को हटाना । लेकिन उतना अर्थ काफी नहीं है । शोषण न हो, गरीबों का जीवन सुखी हो, यह आज स्वतंत्रता का अर्थ हुआ है ।

उन दिनों शायद महात्माजी बारडोली तहसील में थे । उनके दर्शन के लिए हजारों स्त्री-पुरुष आते और पावन होकर जाते थे । एक दिन महात्माजी की सेवा में कोई भेंट ले आया । क्या थी वह भेंट ? एक थाली रूमाल से ढँकी हुई थी । एक महिला ने महात्माजी के आगे वह थाली रखी । थाली में क्या था ? पूरे रुपये भरे थे । रुपयों से भरी थाली गांधीजी के सामने रखकर महिला ने प्रणाम किया और भक्ति-भाव से खड़ी रही ।

महात्माजी ने क्षणभर उस महिला की ओर देखा । फिर गम्भीर भाव से कहा : "मेरे सामने यों नंगी कैसे आयी ? क्या तुम्हें कुछ लगता नहीं है ?

सब चकित रह गये । महिला देखने लगी, कहीं कपड़ा फटा तो नहीं है । लेकिन वह तो नया, सुन्दर वस्त्र पहनकर आयी थी । किसी को समझ में नहीं आया कि बात क्या है । महात्माजी ने कहा : "मेरी बात का अर्थ भी तुम लोगों की समझ में नहीं आता । हम सबकी बुद्धि मानो जड़ हो गयी है । 'यह बहन नंगी है' कहने का अर्थ यह नहीं कि इसके बदन पर कपड़े नहीं हैं, लेकिन यह विलायती कपड़ा है । तुम्हारी लाज विलायती व्यापारी ढँकते हैं । कल वहाँ से कपड़ा नहीं आया तो तुम्हारी लज्जा कैसे ढँकी जायेगी ? परावलम्बी लोग नंगे होते हैं । इसलिए हरएक को अपने हाथ से कते सूत की खादी पहननी चाहिए । अपनी इज्जत अपने हाथ में रखनी चाहिए । जो अपनी इज्जत दूसरों के हाथ में सौंप देता है, उसकी तो फजीहत ही है ।"

महात्माजी की बातों की गम्भीरता देखकर सबने सिर झुका लिया । हमें उन शब्दों की गम्भीरता कभी भूलनी नहीं चाहिए । अन्न और वस्त्र के मामले में प्रत्येक व्यक्ति को, कम-से-कम प्रादेशिक इकाइयों को स्वावलम्बी बनाना ही चाहिए । नहीं तो बाहर से अनाज नहीं आया तो भूखों मरें, बाहर से कपड़ा नहीं आया तो नंगे रहें, ऐसी मुसीबत होगी ।

८. मन की एकाग्रता की शक्ति

मन की एकाग्रता में बड़ी शक्ति है । एकलव्य ने मन एकाग्र करके ही धनुर्विद्या सीखी । मन एकाग्र करने से बहुत सारी समस्याएँ हल हो जाती हैं । सूर्य की किरणों को बिल्लौरी काँच (लेन्स) के द्वारा केन्द्रित कर रूई पर रखो तो रूई जलने लगती है । बिखरी हुई किरणों में यह शक्ति नहीं होती । मन की शक्ति बिखरी रहे तो संसार में तुम्हें सिद्धि प्राप्त नहीं होगी ।

महापुरुषों में ऐसी एकाग्रता होती है । वे प्रयत्नपूर्वक ब्रह्मचर्य से उसे हासिल करते हैं । विवेकानन्द अमरीका गये हुए थे । वहाँ उन्होंने बुखार से तड़पती हुई एक स्त्री को देखा । वे उसके पास गये । उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया और ध्यानस्थ होकर खड़े रहे । फिर आँखें खोलीं और बोले : "तुम्हारा बुखार उतर गया है ।" सचमुच बुखार उतर गया था । मन में ऐसी संकल्प-शक्ति, ऐसी इच्छा-शक्ति रहती है । इसलिए सदा दूसरों की भलाई ही सोचनी चाहिए । हमारे मन में पैदा होनेवाले विचारों का भी संसार पर प्रभाव पड़ता है । एकाग्र विचारों का तो और अधिक पढ़ता है ।

आज गांधीजी की ऐसी ही एक कहानी सुनाता हूँ । सन् १९२७ की बात है । बापूजी मद्रास गये थे । उन्हें पता चला कि ब्रिटेन के मजदूर नेता, मशहूर समाजवादी, श्री फेनर ब्रॉकवे मद्रास के अस्पताल में बीमार हैं । महात्माजी की विशाल सहानुभूति चुप कैसे रहती ? ऐसे मामलों में वे बड़े तत्पर थे । वे अस्पताल गये । फेनर ब्रॉकवे बहुत ही बीमार थे, बेचैन थे ।

गांधीजी बोले : "मैं आपसे मिलने आया हूँ ।"

उन्होंने कहा : "आपकी बड़ी कृपा है ।"

"कृपा तो ईश्वर की है । आपको बहुत तकलीफ हो रही है क्या ?"

"क्या कहूँ ? बड़ी बेचैनी महसूस होती है ।"

"आखिर क्यों ?"

"नींद बिलकुल नहीं आती । जरा नींद आ जाय, तो कितना अच्छा हो ।"

"आप ठीक कहते हैं । नींद तो रसायन है ।" यह कहकर गांधीजी उनके माथे पर प्रेम से हाथ रखकर खड़े हुए, आँखें बन्द कर लीं । मन एकाग्र किया । क्या वे ईश्वर से प्रार्थना कर रहे थे ? या अपनी शान्ति उस तप्त मस्तक में उँडेल रहे थे ? कुछ देर बाद आँखें खोलकर गांधीजी बोले:

"अब आपको नींद आयेगी । आराम होगा। आप सुखी होंगे ।"

इतना कहकर गांधीजी लौट आये । ब्रॉकवे ने एक पुस्तक लिखी है। उसका नाम 'पचास वर्ष का समाजवादी जीवन का इतिहास' है । उसमें वे लिखते हैं : 'कितना आश्चर्य है । गांधीजी गये और कुछ ही देर में मुझे एकदम गहरी नींद आ गयी । नींद खुली, तो कितनी स्फूर्ति लग रही थी !"

एकाग्रता में ऐसी अद्भुत शक्ति है ।

९. गुरुदेव और बापू

असहयोग-आन्दोलन के दिन थे । महात्माजी मानो आग बन गये थे । विदेशी कपड़े की होली जलाते जा रहे थे । कहते थे : "सरकारी स्कूल-कॉलेजों का बहिष्कार करो ।" गुरुदेव रवीन्द्रनाथ को महात्माजी के इस आन्दोलन में द्वेष की गंध आने लगी । उन्होंने बापू को इस बारे में लिखा । गांधीजी ने जवाब दिया : "विदेशी सरकार के प्रति द्वेष फैलाना तो मेरा धर्म है । लेकिन अकसर यह नाराजी और द्वेष व्यक्ति के प्रति हो जाता है । फिर सरकारी अधिकारियों की हत्या होती है । मैं वह द्वेष व्यक्ति से हटाकर वस्तु की ओर मोड़ता हूँ । मैं कहता हूँ कि विदेशी सरकारी अधिकारियों को मत मारो, यह विदेशी कपड़ा जलाओ । ऐसा कहकर मनुष्यों पर टूटनेवाली हिंसा को वस्तु की तरफ मोड़ता हूँ ।"

गुरुदेव ने लिखा : "राष्ट्र अब कहीं जगने लगा है । तो इस वक्त क्या द्वेष-बुद्धि के गाने सिखायेंगे ? प्रातःकाल में पक्षीगण मधुर-मधुर गाते हैं । गाते-गाते ऊँचे आकाश में उड़ते हैं । हम ऊँचे न उड़कर क्या क्षुद्र विषयों में और खराब बातों में ही रमते "रहेंगे ?"

महात्माजी ने जवाब लिखा : "यह सही है कि प्रातःकाल पक्षी गाते-गाते ऊँचा उड़ते हैं, लेकिन पिछले दिन उनका पेट भरा होता है । पिछले दिन वे यदि भूखे रहते, तो मीठा गाते हुए ऊँचा थोड़े ही उड़ते हैं ।"

रविबाबू ने पूछा : "याश्चात्य शिक्षा का क्यों बहिष्कार करते हैं ? राममोहन राय, लोकमान्य तिलक आदि महापुरुष क्या इसी पाश्चात्य शिक्षा की देन नहीं हैं ?"

बापू बोले : "विदेशी भाषा के माध्यम से शिक्षा न लेनी पड़ी होती, तो राममोहन राय, लोकमान्य आदि और भी महान् हुए होते । विदेशी शिक्षा के बावजूद उनकी असली बुद्धि मरी नहीं, क्योंकि वह अनन्त थी । क्या पुराने युग में कबीर और तुलसीदास जैसे रत्न पैदा नहीं हुए थे ? विदेशी शिक्षा के कारण देश की अपार हानि हुई है । राष्ट्र की आत्मा मारी गयी है । लोकमान्य आदि का मूल अंकुर ही बलवान था, तभी वह टिका ।

१०. बरबादी की वेदना

हमारा देश गरीब है । कोई भी उपयोगी चीज यहाँ मुफ्त में खराब करना राष्ट्र की हानि है । उसमें भी खाने-पीने की चीजों की बरबादी तो पाप ही है । पहले के लोग चावल या दाल का दाना भी सड़क पर पड़ा दीखता, तो उसे बीन लेते थे ।

सन् १९३० का समय था । महात्माजी की वह इतिहास-प्रसिद्ध दाण्डी-यात्रा शुरू हुई थी । ८० सत्याग्रहियों को लेकर सत्याग्रह का संदेश देते हुए महापुरुष पैदल चल पड़ा था । समुद्र के किनारे दाण्डी के पास जाकर महात्माजी सत्याग्रह करनेवाले थे । नमक हाथ में लेकर कहनेवाले थे कि रावण-राज्य को समुद्र में डुबोता हूँ । महात्मा का वह पैदल प्रवास यानी एक महान् राष्ट्रीय यात्रा ही थी । वे जहाँ पहुँचते, वहाँ हजारों लोग एकत्र होते और उनका सन्देश सुनते । देशी-विदेशी पत्रकारों की भीड़ लगी रहती थी । वह एक पावन दृश्य होता था ।

गरमी के दिन थे । तरबूजों और खरबूजों का मौसम था । एक पड़ाव पर लोग गाड़ियों में भर-भरकर तरबूज और खरबूजे लाये थे । वे इतने थे कि खाये नहीं जा सकते थे । महात्माजी के

साथ के लोग खाते तो किंतना खाते ? फल वहाँ बरबाद हो रहे थे । कोई आधा ही खाकर फेंक देता था । उस बढ़िया रसीले फल की यह हालत हो रही थी ।

महात्माजी ने वह दृश्य देखा । वह बरबादी देखकर उन्हें दुःख हुआ । वे गम्भीर हो गये । उनके प्रवचन का समय आया । हजारों स्त्री-पुरुष बापू की पावन वाणी सुनने, स्वतंत्रता की अमर पुकार सुनने वहाँ इकठ्ठा हुए थे । महात्माजी मंच पर बैठे । आज वे क्या कह रहे हैं, सुनिये : "मैंने हिन्दुस्तान के वाइसराय को पत्र लिखा है कि जनता की आमदनी जब प्रतिदिन दो आना है, तब आपका रोजाना सात सौ रुपये वेतन लेना ठीक नहीं है । यहाँ तो एक रुपये में आठ लोग की गुजर होती है । आपके साथ सौ रुपयों में कम-से-कम ५-६ हजार लोगों का पेट भरेगा । यानी आप ५-६ हजार लोगों का खाना छीनते हैं । मैंने वाइसराय के पास देश की गरीबी की बात कही। उनकी फिजूलखर्ची की आलोचना की । लेकिन यहाँ क्या देखता हूँ ? सैकड़ों फल बरबाद हुए । साथियों के लिए फल लाना था तो थोड़े से लाते । लेकिन गाड़ी भर-भरकर लाये । अब मैं वाइसराय की आलोचना किस मुँह से करूँ ? यों फिजूलखर्च करना पाप है । आप लोगों ने मेरा सिर नीचा कर दिया । देश में एक तरफ भुखमरी है, आधा पेट खाकर जीनेवाले लोग हैं और यहाँ मेरी स्वातन्त्र्य-यात्रा में इस तरह की बरबादी होती है । अपनी वेदना मैं कैसे व्यक्त करूँ ? फिर से ऐसा पाप नहीं करना ।"

उस प्रवचन को सारे लोग सिर झुकाकर सुनते बैठे थे । अनेक लोगों की आँखों में आँसू छलक आये थे । महात्माजी के एक-एक शब्द में उनकी दुखी आत्मा प्रकट हो रही थी । उस दिन का भाषण जिन्होंने सुना, वे कभी उसे भूल नहीं सकते । वह ऐसी अमर और उद्बोधक वाणी थी।

११. निराश्रित होने का आनन्द

हरिजनों को सवर्ण हिन्दुओं से कानूनन् अलग न किया जाय, इस बात पर सन् १९३२ में गांधीजी ने पूना में उपवास किया । तब पूना-समझौता हुआ । फिर उन्होंने जेल से हरिजनों के सम्बन्ध में हरिजन-पत्रों में लेख लिखने की अनुमति माँगी । अनुमति नहीं मिली, इसलिए उपवास शुरू किया था । उन्हें जेल से छोड़ दिया गया । लेकिन वे कानून को भंग करने निकले । क्योंकि आन्दोलन के जारी रहते वे बाहर कैसे रहते ? सरकार ने फिर पकड़ा । फिर लेख लिखने की अनुमति माँगी । फिर उपवास । सरकार तो दुराग्रही थी, जिद्दी थी, एक तरह से निर्लज्ज थी । आखिर सरकार ने जब उन्हें मुक्त किया, तब महात्माजी ने खुद जाहिर किया कि "सालभर मैं समझूँगा कि जेल में ही हूँ । दूसरा राजनैतिक काम नहीं करूँगा, केवल हरिजनों का काम करूँगा ।" पहले वहाँ पर्णकुटी में २१ दिन का उपवास किया और फिर हिन्दुस्तान के दौरे पर निकले । वही उनका सुप्रसिद्ध अस्पृश्यता-निवारण सम्बन्धी दौरा है । यह दौरा मध्यप्रान्त (वर्तमान मध्य प्रदेश और विदर्भ) से शुरू हुआ । 'मध्यप्रान्त के शेर' बैरिस्टर अभ्यंकर उनके साथ थे।

उस दिन नागपुर में सभा थी । लाखों लोग एकत्र हुए थे । महात्माजी को थैली अर्पित की गयी । उस समय बैरिस्टर अभ्यंकर की पत्नी ने अपने शरीर से जेवर उतारकर दे दिये ।

श्री अभ्यंकर ने कहा : "बापू, ये आखिरी जेवर हैं । अब मेरी पत्नी के पास कोई जेवर बचा नहीं है ।"

गांधीजी बोले : "ठीक है । लेकिन अभी तक आपको रोटी की चिन्ता नहीं है न ? जिस दिन सुनूँगा कि अभ्यंकर को खाना नहीं मिल रहा है उस दिन खुशी से नाचूँगा ।"

बापू जिससे प्रेम करते थे, उनसे अधिक-से-अधिक त्याग की अपेक्षा रखते थे ।

१२. साइकिल की सवारी

महात्माजी का जीवन सोद्देश्य था । जो भी बातें जीवनोपयोगी थीं, उन सबकी उन्होंने उपासना की थी । वे यंत्रों के विरोधी नहीं थे । उन्होंने कई बार कहा था : "जिसने कपड़ा सीने की मशीन ईजाद की, उसका बहुत बड़ा उपकार है ।"

उन्होंने कहा : "मुझे बिजली की शक्ति चाहिए । उसे झोंपड़ी-झोंपड़ी में ले जा सकूँ और वहाँ के ग्रामोद्योगों में उसका उपयोग हो सके, तो कितना अच्छा हो ।" उपकारक यंत्र उन्हें चाहिए थे ।

यह कहानी तब की है, जब बापू साबरमती-आश्रम में थे । गांधीजी कुछ महत्त्व के काम के लिए आश्रम से अहमदाबाद शहर गये थे । फिर दूसरी एक जगह उन्हें किसी सभा में भी जाना था । शहर के काम में काफी समय लग गया । वे उस काम में व्यस्त थे । लम्बे डग भरते हुए वह निर्भय पुरुष, वह कर्मयोगी आ रहा था । इतने में उधर आश्रम से एक भाई साइकिल से आ रहे थे । गांधीजी को देखते ही वह साइकिल से उतर पड़े ।

"कहाँ चले ?" गांधीज़ी ने पूछा ।

"बापू, आपको उस सभा में जाना है । दस ही मिनट रह गये । मैं आपको याद दिलाने आ रहा था । न आता तो आप बाद में कहते कि क्यों नहीं बताया ?"

"वह सभा शायद आज ही तय हुई है ?"

"जी, हाँ। समय भी हो रहा है ।"

"तो फिर अपनी साइकिल दे दो ।"

"आप साइकिल से जायेंगे ? गिर पड़ें तो ? शहर में बहुत भीड़ होती है, बापू ।"

"मैंने अफ्रीका में सीखा था, सो भूलने के लिए नहीं सीखा था। साइकिल चलाना सबको आना चाहिए। लाओ। वक्त खराब न करो।"

यह कहकर बापू साइकिल पर चढ़े और तेजी से निकल गये। आश्रमवासी भाई देखते रह गये। साइकिल पर गांधीजी की मूर्ति आँखों के सामने आती है तो हँसी आती है न ?

१३. प्रेम का उपहार

उन दिनों गांधीजी इंग्लैण्ड में थे। यह सन् १९३१ की बात है। गांधीजी की सुरक्षा के लिए, या कहें उन पर निगरानी रखने के लिए, उनके साथ हमेशा खुफिया पुलिस का एक आदमी रहता था। गांधीजी का सारा व्यवहार खुला होता था। उसमें किसी तरह का लुकाव-छिपाव नहीं रहता था। सत्य तो सूर्य के प्रकाश के समान होता है। वह अन्धकार में कहीं छिपकर बैठ नहीं सकता। सत्य निर्भय होता है। उसे छिपने की इच्छा भी नहीं होती।

वह खुफिया पुलिस का आदमी वहाँ ऊब गया। क्योंकि वहाँ उसे कुछ भी काम नहीं था। गांधीजी के काम में वह भी हाथ बँटाने लगा। कभी सामान सजाता, तो कभी कुछ करता। श्री प्यारेलालजी से और श्रीमती मीराबहन से वह कहता कि "मुझे भी कुछ काम दीजिये, संकोच करने की कोई बात नहीं।" वह गोरा पुलिसवाला इस बात के लिए उत्सुक था कि बापू का कुछ तो काम करने का अवसर मिले। जब कोई काम मिलता, तो वह खुशी से फूल उठता था और उस काम से अपने को धन्य मानता था।

गांधीजी का लन्दन का काम खत्म हुआ। वे गोलमेज परिषद् के लिए गये हुए थे। भारत की समस्या हल करने गये थे। लेकिन अभी स्वतंत्रता की घड़ी नहीं आयी थी। ब्रिटिशों की कारस्तानी और भारतीय नेताओं के मतभेद, यह सारा देखकर गांधीजी बहुत खिन्न हुए। सबसे

बिदा लेकर वे हिन्दुस्तान लौटने के लिए निकले । कोलाहल शुरू हो गया । छोटे-छोटे अंग्रेज बच्चे गांधीजी के चारों ओर उमड़ने लगे ।

इतने में एक बड़ा अफसर आया । गांधीजी से पूछा : "आपके लिए और किसी बात की जरूरत तो नहीं है ? सारी सुविधा है न ? कोई तकलीफ तो नहीं है ?"

"सब ठीक है । और कुछ नहीं चाहिए । पर मुझे सिर्फ एक चीज माँगनी है ।"

"क्या है ? बताइये । संकोच न कीजिये ।"

"यह जो खुफिया पुलिस का आदमी है, उसे ब्रिन्दिसी तक मेरे साथ चलने दें । भेज सकेंगे न ? 'ना' नहीं कीजियेगा ।"

"किसलिए ?"

"इसलिए कि वह अब मेरे ही परिवार का आदमी हो गया है । वहाँ तक साथ जाने दीजिये।"

"तो फिर ले जाइये ।"

वह गोरा पुलिसवाला बहुत खुश हुआ । ब्रिन्दिसी तक वह महात्माजी के साथ गया ! वहाँ उसने प्रणाम किया । गांधीजी ने उसका पता अपने पास लिख लिया ।

फिर गांधीजी भारत आये । देश में जनता भड़की हुई थी । गांधीजी ने वाइसराय से मिलने के लिए दो तार किये । लाटसाहब ने मिलने से इनकार कर दिया । फिर सत्याग्रह शुरू हुआ । गांधीजी को यरवदा जेल में रखा गया ।

राष्ट्र का सारा भार ढोनेवाले वे महापुरुष ! लेकिन उस गोरे खुफिया पुलिसवाले को वे भूले नहीं थे । उन्होंने उसे एक घड़ी उपहार में भेजी । उस पर 'सप्रेम भेंट' खुदवा दिया, अपना नाम भी खुदवा दिया था ।

वह प्रेमभरी भेंट पाकर न जाने वह पुलिसवाला कितना खुश हुआ होगा ।

१४. तभी तो दीनबन्धु हो

कांग्रेस के उस युवक कार्यकर्ता को गांधीजी के कठोर वचन उचित लगे । दुःख तो उसे हुआ ही । फिर भी उन कठोर शब्दों के पीछे रहा हुआ तत्त्व उसकी समझ में आ गया । वह वहाँ से उठा और भारी कदमों से चल पड़ा । हृदय धक्-धक् कर रहा था । पैर भारी लग रहे थे । भविष्य अन्धकारमय दीखता था । वह दरवाजे तक गया ही था, इतने में देहरी से उसके पैर पीछे मुड़ने लगे । वह गांधीजी के पास आया, बैठा और गिड़गिड़ाने लगा : "बापू, आपकी बात मुझे जँची है। लेकिन मैं गरीब हूँ । जेब में एक पैसा भी नहीं है । जैसे-तैसे पैसे जोड़कर यहाँ तक तो आया । अब लौटूँ कैसे ? लौटने के लिए किसी तरह पैंतीस रुपये दीजिये । भरसक जल्दी ही यह पैसा लौटा दूँगा ।"

इतना बोलकर वह गांधीजी के सामने सिर नीचा करके बैठ गया । आँखों से आँसू बह रहे थे । बापू को भी बुरा लगा । लेकिन उन्होंने कहा : "मुझसे कुछ न मिलेगा । पहले से ही एक हजार रुपयों की जिम्मेदारी लिये बैठे हो । उसमें इतना और बढ़ाना नहीं चाहिए । तुम्हें नया जीवन शुरू करना है न ? तो फिर नया जीवन कर्ज से शुरू न करो । नया ही रास्ता अपनाओ । उसी में तुम्हारा भला है ।"

वह युवक उठा । यह उसके लिए दूसरा धक्का था । एक हजार रुपयों की व्यवस्था तो करनी ही थी । वह बाहर जाने लगा । लेकिन उसके चेहरे पर नये जीवन में पदार्पण करते समय का एक नया ही तेज दीख रहा था । एक प्रकार के आत्मविश्वास के साथ वह बाहर निकला ।

उसके पीछे-पीछे दीनबन्धु एण्ड्रूज भी गये । उन्होंने उसे टिकट खरीद दिया । दीनबन्धु आश्रम लौट आये । उन्हें हँसी आ रही थी । बापू हँसते हुए बोले : "तुम्हारी चालाकी मुझे मालूम हो गयी । तुम्हारा नाम 'दीनबन्धु' यों ही थोड़े पड़ा है ?"

१५. पहरेवाला भी रो पड़ा

मार्च, १९२२ में गांधीजी को सजा हुई । बारडोली का सत्याग्रह स्थगित करने के बाद उन्हें गिरफ्तार करने की जरूरत नहीं थी । लेकिन आन्दोलन रोक देने के कारण गांधीजी के प्रति जनता और राष्ट्र के नेता क्षुब्ध हैं, यह देखकर उस तेजोमय सूर्य को जेल में ठूँसने का ही सरकार ने निश्चय किया । गांधीजी ने अपराध स्वीकार किया । उन्होंने कहा : "इस शासन के विरुद्ध असन्तोष पैदा करना मेरा धर्म है ।" पहले लोकमान्य को छह वर्ष की सजा दी गयी थी, उसी उदाहरण को सामने रखकर न्यायाधीशों ने गांधीजी को भी छह वर्ष की सजा सुनायी । छह साल तक राष्ट्रपिता दिखनेवाले नहीं थे । महादेवभाई रोने लगे । मुकदमे के समय तात्यासाहब केलकर खासतौर पर इसीलिए अहमदाबाद गये थे । वे महादेवभाई को धीरज बँधा रहे थे । लोकमान्य को सजा सुनायी गयी थी, तब हम भी ऐसे ही रोये थे – कहकर महादेवभाई को सान्त्वना देते थे। वह प्रसंग बड़ा गम्भीर और हृदयद्रावक था ।

लेकिन बंगाल के उस गाँव के एक मकान में वह संतरी भला क्यों रो रहा है ? उस मकान में एक बड़ा क्रान्तिकारी रहता था । मेरा खयाल है, वह उल्लासकर दत्त ही थे । वे जेल से छूटे थे। उन्हें जरा मतिभ्रम-सा हुआ था, इसलिए सरकार ने उन्हें छोड़ दिया था । वे उस मकान में रहते थे । उनकी स्मरण-शक्ति फिर सतेज हो रही थी । पागलपन मिट रहा था ।

वह पहरेदार रो रहा था । उसके हाथ में एक बंगाली अखबार था ।

उस क्रान्तिकारी ने उससे पूछा : "क्यों रोते हो ?"

उसने कहा : "मेरी जाति के एक आदमी को छह वर्ष की सजा हुई है । वह बूढ़ा है । ५४-५५ वर्ष की उसकी उम्र है । देखो, इस अखबार में है ।"

अखबार में गांधीजी के उस ऐतिहासिक मुकदमे की तफसील थी । गांधीजी ने अपनी जाति किसान बतायी थी और धन्धा कपड़े की बुनाई लिखाया था । वह पहरेवाला मुसलमान था । वह बुनकर जाति का था । यह पढ़कर उसकी आँखें भर आयी थीं ।

उस महान् क्रान्तिकारी की समझ में सारी बातें आयीं । वह अपने संस्मरण में लिखते हैं : "हम कैसे क्रान्तिकारी हैं ? सच्चे क्रान्तिकारी तो गांधीजी हैं । सारे राष्ट्र के साथ वे एकरूप हुए थे । मैं किसान हूँ, मैं बुनकर हूँ – यह उनका शब्द राष्ट्रभर में पहुँच गया होगा । करोड़ों लोगों को यही लगा होगा कि हममें से ही कोई जेल गया । जनता से जो एकरूप हुआ, जनता से जिसने सम्पर्क जोड़ा, वही विदेशियों के बन्धन से देश को मुक्त कर सकता है ।उस सच्चे महान् क्रांतिकारी को प्रणाम !"

१६. एक राष्ट्र का प्रतिनिधि

सन् १९३१ में दिल्ली में गांधी-इरविन समझौता हुआ । सत्याग्रह की विजय हुई थी । यह पहला समझौता है, जो ब्रिटिश सरकार ने हिन्दुस्तान से खुद होकर किया था । गांधीजी गोलमेज परिषद् के लिए लन्दन जाने को राजी हो गये और निकले । वह देखो, बम्बई से जहाज खुल रहा है । चलते-चलते गांधीजी एक छोटे बच्चे का चुम्बन ले रहे हैं । फोटोग्राफर फोटो ले रहे हैं । खुल गया जहाज ।

आज जहाज अदन पहुँचनेवाला था । अदन की भारतीय तथा अरबी जनता की ओर से गांधीजी को मानपत्र दिया जानेवाला था । लेकिन उस समारोह के समय तिरंगा झण्डा फहराने की अनुमति वहाँ का पोलिटिकल रेजिडेंट दे नहीं रहा था ।

गांधीजी ने स्वागत-समिति के अध्यक्ष से कहा : "रेजिडेंट को फोन करके कहिये कि हिन्दुस्तान सरकार के साथ कांग्रेस का समझौता हुआ है । ऐसी स्थिति में आपको राष्ट्रध्वज के लिए इनकार नहीं करना चाहिए । लेकिन यदि आप अनुमति नहीं देते हैं, तो मैं मान-पत्र नहीं लूँगा।"

फोन किया गया । पोलिटिकल रेजिडेंट ने नाजुक परिस्थिति पहचान ली और अनुमति दे दी । तिरंगा झण्डा अदन में फहराया गया । लाल सागर और अरब सागर ने वह देखा ।

गांधीजी ने मान-पत्र का उत्तर देते हुए कहा : “जैसे राष्ट्रध्वज के लिए हजारों लड़े, मरे, वह ध्वज राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रतिनिधि के स्वागत में न हो तो कैसे चलेगा ! राष्ट्रीय ध्वज के लिए अनुमति देने का यह प्रश्न नहीं है । जहाँ राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रतिनिधि को बुलाया गया हो, वहाँ उसके ध्वज को भी सामान्य-स्थान मिलना ही चाहिए ।"

तब वहाँ के भारतीयों और अरब नागरिकों को कितना आनन्द हुआ । उस जहाज के सैकड़ों गोरे लोग वह प्रसंग देख रहे थे ।

१७. पुन्नीलाल नाई

गांधीजी इलाहाबाद गये थे । आनन्द भवन में ठहरे थे । कमला नेहरू स्मारक औषधालय का शिलान्यास करना था, इसलिए आये थे । सन् १९३९ के नवम्बर की २३ तारीख थी ।

गांधीजी को एक नाई की जरूरत थी । जवाहरलालजी के निजी सचिव श्री उपाध्यायजी ने एक कुशल नाई को बुलाया । उसका नाम पुन्नीलाल था । श्री उपाध्याय ने उसे साफ खादी के कपड़े पहनने को दिये । वे कपड़े उसे ठीक नहीं हो रहे थे । फिर भी वह पहनकर आनन्द भवन की दूसरी मंजिल पर गया । गांधीजी अखबार पढ़ रहे थे । उसे देखकर बोले : “अरे, तुम आ गये! तुम अच्छा बाल बनाते हो न ?”

नाई नम्रता से मुस्कराता रहा । वह गांधीजी के बाल बनाने बैठा । उसने उनकी दाढ़ी भी बनायी । गांधीजी हँसी-मजाक कर रहे थे । उससे उसके घर की जानकारी पूछ रहे थे । बीच में उन्होंने पूछा : “लगता है कि हमेशा खादी पहनते हो ।”

“नहीं । ये कपड़े थोड़े समय के लिए उधार हैं ।”

उसका सच बोलना गांधीजी को अच्छा लगा । गांधीजी के बाल बनाते समय का श्री उपाध्याय ने एक फोटो खींचा ।

काम हुआ । नाई जाने लगा । उसने गांधीजी को प्रणाम किया । बापू ने कहा : "तुम अच्छा बाल बनाते हो ।"

"तो मुझे सर्टीफिकेट दीजिये ।"

"जब तक तुम अच्छा काम करते रहोगे, तब तक सर्टीफिकेट की जरूरत ही क्या ?"

लेकिन नाई पीछे पड़ ही गया । आखिर गांधीजी राजी हुए । वह देखो, कागज आ गया । गांधीजी लिखने लगे :

आनन्द भवन, इलाहाबाद

भाई पुन्नीलाल ने बड़े भाव से अच्छी तरह मेरी हजामत की है । उनका उस्तरा देहाती और बगैर साबुन के हजामत करते हैं ।

२३-११-१९३९ **मो. क. गांधी**

वह नाई इतना खुश होकर गया कि मानो उसे पृथ्वी-जितनी मूल्यवान् निधि मिली हो । जवाहरलालजी ने उसे दो रुपये दिये । और उपाध्यायजी से वह फोटो भी ले गया । वह फोटो और वह प्रशस्तिपत्र दोनों पुन्नीलाल की अनमोल सम्पत्ति हैं ।

एक भाई सौ रुपये देने लगा था, लेकिन पुन्नीलाल वह चीज देने को राजी नहीं हुआ । श्री पुरुषोत्तमदासजी टण्डन ने खूब मनुहार करके उस फोटो और प्रशस्ति-पत्र का फोटो लिवाया और प्रकाशित किया, तब यह बात संसार को मालूम हुई ।

१८. यन्त्रों की मर्यादा

चार्ली चैपलीन दुनिया को हँसानेवाला व्यक्ति है । फिल्म में काम करता है । वह गरीबी से ऊपर उठा और गरीबों के बीच ही रहता है । गांधीजी से वह मिला । उसने पूछा : "आप यन्त्रों के खिलाफ क्यों हैं ?"

"देश में करोड़ों लोग बेकार हैं । उन्हें कौन-सा उद्योग दूँ ? इसलिए चरखा दिया ।"

"केवल कपड़े के लिए ग्रामोद्योग ?"

"अन्न और वस्त्र के मामले में प्रत्येक राष्ट्र को स्वावलम्बी होना चाहिए । हम स्वावलम्बी थे भी । लेकिन इंग्लैण्ड में यन्त्रों के कारण अत्यधिक उत्पादन होने लगा । उसे खपाने के लिए वे मण्डी खोजने लगे । भारत के बाजार पर कब्जा जमाकर आप लोग हमारा शोषण कर रहे हैं । क्या यह इंग्लैण्ड विश्व-शान्ति के लिए खतरा नहीं है ? कल हिन्दुस्तान जैसा विशाल देश यदि बृहद् यन्त्रों से उत्पादन करने लगे, तो संसार को कितना बड़ा खतरा है ।"

"लेकिन धन का ठीक वितरण हो, काम का समय घटाया जाय, श्रमिकों को अधिक आराम मिले और वे अपने विकास में समय खर्च करने लगें, तो दूसरों को गुलाम बनाकर बाजार को कब्जे में लेने की क्या जरूरत है ? तब भी क्या आपका यन्त्रों से विरोध रहेगा ?"

"नहीं ।"

१९. नव-जीवन का सन्देश

गांधीजी आन्ध्र प्रदेश में प्रवास कर रहे थे । आन्ध्र मलमल जैसी खादी के लिए प्रसिद्ध है । चिकाकोल गाँव में खादी की प्रदर्शनी थी । गांधीजी को वहाँ जाना था । वह देखो, आन्ध्र की बहनें चरखा कात रही हैं । पास ही पूनी रखी है । एक-एक पूनी से तीन-तीन सौ तार सूत निकल

रहा है । ५०-६० नम्बर का सूत है । अपने ही हाथ के सूत का वस्त्र उन बहनों ने पहना था । दूध की धार के समान सूत निकल रहा था । वह अदभुत दृश्य देखकर गांधीजी का हृदय उमड़ आया और वे भी चरखा लेकर कातने लगे ।

एक के पीछे एक बहन आती और गांधीजी के चरणों के पास साफ सूत की गुण्डी भेंटस्वरूप रखकर प्रणाम करके चली जाती । लेकिन ये कौन दो बहनें ? ये दुखी हैं । चेहरे पर दैन्य, दुःख और लज्जा के कई भाव हैं । बापू को प्रणाम कर वे बोलीं :

“हम नीच जाति में पैदा हुई हैं । पशु-पक्षियों से भी हमें हीन समझा जाता है । हम आज से खादी पहनने का व्रत ले रही हैं ।”

गांधीजी ने गम्भीर वाणी में आश्वासन देते हुए कहा : “जन्म से ही कोई पापी नहीं होता । आप सूत कातिये । ईमानदारी से मेहनत करके गुजारा चलाइये । सदाचारी रहिये । तो आप उत्तम मनुष्य होंगी ।”

बापूजी की वाणी गद्गद थी । उन दोनों बहनों का मुखकमल आशा से प्रफुल्ल था, मानो नवजीवन मिला हो, नवजीवन प्रारम्भ हुआ हो ।

२०. राष्ट्र-नेता और उसका वारिस

वे दाण्डी-यात्रा के दिन थे । महात्माजी पैदल जा रहे थे, जैसे रामचन्द्र की यात्रा चल रही हो । सारे राष्ट्र को स्फूर्ति मिल रही थी । राष्ट्र के जीवन में प्राण-संचार हो रहा था ।

शाम को एक गाँव में सभा हुई । प्रार्थना हुई । अब मही नदी पार कर उस पार जाना था । ज्वार का पानी आया हो तो नाव ठेठ किनारे तक जाती । लेकिन ज्वार समाप्त होकर अब भाटे का समय हो रहा था । भाटा शुरू होने से पहले उस पार जाना था । वरना पानी कम हो जाय, तो

नाव जा नहीं पातीं और मही नदी के दलदल में रात के समय उस महापुरुष को पैदल जाना पड़ता।

नाव तैयार हुई । गांधीजी नाव में बैठे, मानो निषादराज की नाव में रामचन्द्र बैठे हों । लेकिन गांधीजी के साथ जाने को मिले, इस लोभ से नाव में कितने लोग चढ़ गये । 'ना' किसको कहा जाय ? नाव को जल्दी-जल्दी ले जाना था । भारी नाव को खेते हुए ले जाना दूभर हो रहा था । आखिर नाव फँस गयी । पानी बहुत कम था । राष्ट्र-पुरुष हाथ में लाठी लेकर नीचे उतरा । एक-एक कदम बड़ी मुश्किल से पैर जमाते-जमाते बढ़ने लगे । मही नदी में बहुत दलदल होता है । कहीं -कहीं घुटनों से ऊपर तक था । लेकिन न थकते, न हाँफते, दृढ़ता के साथ महात्माजी जा रहे थे । उन्हें इतनी दूरी तय करने में एक घण्टे से ज्यादा समय लगा ।

गांधीजी उधर पहुँचे ही होंगे कि इस किनारे पर पण्डित जवाहरलाल नेहरू की मोटर आ रुकी । वे उन दिनों राष्ट्राध्यक्ष थे । महात्माजी से मिलने आये थे । गांधीजी तो उस पार चले गये । भाटा उतर गया था । नाव चलना असम्भव था ।

किसी ने पूछा : “पण्डितजी, क्या किया जाय ?”

वे बोले : “मैं पैदल जाऊँगा ।”

“बहुत दलदल है । थक जायँगे ।”

“वे बूढ़े होते हुए भी गये । मैं तो तरुण हूँ ।”

जवाहरलालजी ने कपड़े ऊपर किये और कीचड़ में से होकर राष्ट्रपिता से मिलने निकले। पिता को शोभा देने लायक ही वह वारिस (पुत्र) था । जाते समय नेहरू बोले : “मैं उनसे मिलकर तुरन्त लौट आऊँगा ।” लेकिन उस अनन्त कीचड़ में जाने से नेहरू थक गये । गांधीजी से जा मिले । लेकिन उस रात लौट आने की हिम्मत वे कर नहीं सके । जहाँ नेहरू थक गये, वहाँ राष्ट्रपिता बिना थके गये । कहाँ से आया यह बल ? इच्छा शक्ति से ? कृत संकल्प से ?

खण्ड - ३

विनम्र सेवक

२१. शरीर सेवा का साधन है

बापू दीखने में दुबले-पतले थे । लोग उन्हें मुट्ठीभर हड्डियों का ढाँचा कहते थे । लेकिन वे अपनी सेहत की खूब देखभाल करते थे । आहार, घूमना, मालिश सब नियमित रूप से चलता था । शरीर सेवा का साधन है । उसे स्वच्छ और सतेज रखना हमारा कर्तव्य है । महात्माजी दुर्बलता के पुजारी नहीं थे । कमजोरी चाहे तन की हो या मन की, उन्हें अच्छी नहीं लगती थी । खूब खाओ, खूब सेवा करो, ऐसा वे कहा करते थे ।

विनोबाजी की सेहत जरा कमजोर हो गयी थी । सन् १९४० में महात्माजी ने विनोबाजी को ही प्रथम सत्याग्रही चुना था । विनोबाजी जैसी सत्य और अहिंसा की मूर्ति आज देश में शायद ही कोई मिले । साबरमती आश्रम में सबसे पहले जो सत्यार्थी लोग आये, उनमें युवक विनोबा भी एक थे ।

सेवाग्राम में गांधीजी के पास शिकायत गयी कि विनोबाजी सेहत का ख्याल नहीं रखते हैं । एक दिन गांधीजी ने विनोबाजी से कहा : “तुम सेहत का ख्याल नहीं करते हो । तुम्हें अब मुझे अपने कब्जे में लेना होगा । तुम्हारी सेहत खूब हृष्ट-पुष्ट करनी होगी ।”

विनोबाजी ने कहा : “मुझे तीन-महीनों का मौका दीजिये । उतने में वह नहीं सुधरी, तो फिर आप अपने हाथ में लेना ।”

विनोबाजी ने सोचा कि जिसके सिर पर हिन्दुस्तान का भार है, उसे मेरी सेहत की चिन्ता क्यों करनी पड़े ? और उन्होंने अपनी सेहत की ओर ध्यान देना शुरू किया । तीन महीने में २५ पौण्ड वजन बढ़ा लिया । महात्माजी को भारी खुशी हुई ।

महात्माजी को हृष्ट-पुष्ट लोगों की आवश्यकता थी । कमजोरों की नहीं । ध्यान में रखो, कमजोरी पाप है ।

२२. महात्मा का दुःख

उन दिनों गांधीजी ने देशभर का दौरा बन्द कर दिया था। स्थायी रूप से सेवाग्राम में रहने लगे थे।

उस दिन उनका जन्म-दिन था। हम साधारण लोग अपना जन्म-दिन मिष्ठान्न खाकर, नाच-गाकर मनाते हैं, लेकिन आश्रम में ऐसा कुछ भी नहीं होता था। आश्रम में जन्म-दिन का सारा कार्यक्रम बड़ी सादगी से मनाया जाता था।

इस वर्ष भी शाम को रोज की तरह सायं-प्रार्थना के लिए लोग जमा हुए। विशेष रूप से बनाये गये ऊँचे मंच पर गांधीजी प्रार्थना के लिए बैठे। न तो वहाँ कोई सजावट थी, न फूल-माला थी।

केवल एक ऊँची जगह पर गांधीजी के सामने एक दीये में बाती धीमे-धीमे जल रही थी। स्वयं जलकर जग को रोशनी देनेवाला वह दीया मानो गांधीजी के जीवन का प्रतीक था।

गांधीजी ने दीये की तरफ देखा। आँखें मींच लीं। प्रार्थना शुरू हुई।

आज प्रार्थना के बाद गांधीजी के जन्म-दिन के निमित्त विशेष प्रवचन होनेवाला था। गांधीजी ने प्रारम्भ में पूछा : "यह दीया किसने जलाया ?"

कस्तूरबा ने कहा : "मैंने।"

गांधीजी बोलने लगे : "आज के दिन सबसे खराब बात कोई हुई है तो वह यह कि 'बा' ने आश्रम में दीया जलाया। आज मेरा जन्म-दिन है, क्या इसीलिए यह दीया जलाया गया ? अपने आसपास के देहातों में जाने पर मैं देखता हूँ कि गाँववालों को रोटी पर लगाने के लिए तेल तक नहीं मिलता और आज मेरे आश्रम में घी जलाया जा रहा है।"

फिर 'बा' को सम्बोधित करते हुए बोले : "इतने साल तक साथ रहते हुए तुमने यही सीखा! गाँववालों को जो चीज नहीं मिलती, उसका उपभोग हमें नहीं करना चाहिए। मेरा जन्म-दिन है तो क्या हुआ ? जयन्ती के दिन तो सत्कार्य करना होता है, पाप नहीं।"

भाषण समाप्त हुआ । लेकिन प्रवचन में जो उपदेश मिला, उसे 'बा' कभी भूलीं नहीं ।

महात्माजी के मन में सदा गाँवों का ख्याल रहता था। वे मानते थे गाँववालों का सुख ही हमारा सुख है, उनका दुःख ही हमारा दुःख है ।

२३. देह समाज की धरोहर है

बच्चों, बापूजी बड़े निर्भय थे । उन्होंने प्रंचण्ड हिंसा का सामना आत्मबल से किया । उन्हें मृत्यु का भय नहीं था । उनके जैसी निर्भयता तथा वीरता और किसमें हो सकती है ? मृत्यु तो उनका सन्मित्र ही था ।

लेकिन महात्माजी अपनी सेहत का पूरा ख्याल रखते थे । वे शरीर की उपेक्षा को पाप मानते थे । यह शरीर समाज की सम्पत्ति है, समाज की धरोहर है । उसका दुरुपयोग करने का मुझे कोई अधिकार नहीं है – यह उनकी भावना थी ।

एक बार बापू घूमने निकले । रास्ते में उनके पैर में ठोकर लगी । अँगूठे से खून बहने लगा । पास ही कस्तूरबा थीं । गांधीजी बोले : "बा, जल्दी पट्टी लाओ, मेरे अँगूठे में बाँधो ।"

कस्तूरबा ने विनोद में कहा : "आप तो कहते हैं कि आपको मृत्यु का भय नहीं है और आपको किसी बात का दुःख नहीं है । तब जरा-सी ठोकर लगी और थोड़ा खून बह गया तो इतना घबराने की कया बात है ?"

बापू गम्भीरता से बोले : "बा, यह शरीर जनता की सम्पत्ति है । मेरी असावधानी से इस अँगूठे में पानी लग जाय, वह पक जाय और ७-८ दिन मुझसे कोई काम न हो पाये, तो उससे लोगों का कितना नुकसान होगा । उससे लोगों का मुझ पर जो विश्वास है, वह खण्डित होगा ।"

बा शरमा गयीं । जल्दी पट्टी लाकर बापू के अँगूठे में बाँध दीं ।

बापू के मन में राष्ट्र-हित की कितनी चिन्ता थी ।

२४. 'गांधी मर गया'

हम सबको मृत्यु का बड़ा भय लगता है । लेकिन जीवन और मरण दोनों ईश्वर की बड़ी देन हैं । दिन और रात दोनों में बड़ा आनन्द है । दिन में सूरज दीखता है, तो रात में चाँद और असंख्य तारों की शोभा दीखती है । अमावस्या और पूर्णिमा दोनों की वन्दना करनी चाहिए । छोटा बच्चा माँ के दोनों स्तनों से भरपेट दूध पीता है । जीवन और मरण जगन्माता के दो स्तन ही हैं । दोनों में आनन्द है ।

महात्माजी मरण को भी ईश्वर की कृपा मानते थे । कई बार अपने उपवास के समय कहा करते थे कि 'मर जाऊँ तो भी ईश्वर की कृपा ही मानिये ।' सन् १९१६-१७ की बात है । बिहार के चम्पारण में महात्माजी किसानों का आन्दोलन चला रहे थे । गोरे जमींदार सरकार की मदद से भारी जुल्म करते थे । एक- बार एक जवान किसान लाठी की मार से सिर फूट जाने से मर गया । उसकी माँ बूढ़ी थी । उसका वह इकलौता बेटा था । उस माँ के दुःख की सीमा नहीं थी । वह महात्माजी के पास आकर बोली : "मेरा इकलौता बच्चा चला गया । उसे किसी तरह जिला दीजिए ।" गांधीजी कया कर सकते थे ? गम्भीर होकर बोले : "माँ, मैं तुम्हारे बच्चे को कैसे जीवित करूँ ? मेरी ऐसी शक्ति कहाँ ? ऐसी पुण्याई कहाँ ? और वैसा करना ठीक भी नहीं है । मैं उसके बदले तुम्हें दूसरा बच्चा दूँ ?"

यह कहकर महात्माजी ने उस बूढ़ी माँ के काँपते हाथ अपने सिर पर रख लिये और आँसू सँभालते हुए उस माता से कहा : "लो लाठी-चार्ज में गांधी मर गया । तुम्हारा लड़का जिन्दा है और वह तुम्हारे सामने खड़ा है, तुम्हारा आशीर्वाद माँग रहा है ।"

उस माँ के आँसू रोके न रुकते थे । उसने बापू को अपने पास खींच लिया । उनका सिर अपनी गोद में लेकर 'मेरा बापू' बोलने लगी । उसने उन्हें प्रेमभरा आशीर्वाद दिया कि 'सौ साल जियो ।'

२५. करुणामूर्ति

महात्माजी को हम अकसर भगवान् बुद्ध अथवा भगवान् ईसा की उपमा दिया करते हैं। भगवान् बुद्ध की तरह गांधीजी ने भी 'मुझे बलि चढ़ाओ' कहा। ईसामसीह सभी तरह से दलित और पतित लोगों की सेवा करते थे। महारोगियों की सेवा करते थे। गांधी ऐसे ही सेवामूर्ति थे।

चम्पारण का ही एक करुण गम्भीर प्रसंग है। किसानों का सत्याग्रह चल रहा था। महात्माजी के सत्याग्रह में सभी भाग ले सकते थे। सैनिक-युद्ध में बन्दूक चला सकनेवाले ही काम आते हैं। लेकिन जिस प्रकार छोटे से लेकर बड़े तक सब राम-नाम लेते हैं, उसी प्रकार सब अपने-अपने आत्मा के बल पर इसमें भाग ले सकते हैं। सत्याग्रह में तमाम लोग शामिल हो सकते हैं। चम्पारण की उस सत्याग्रही सेना में कुष्ठ-रोग से पीड़ित एक खेतिहर मजदूर था। वह पैरों में चिथड़ा लपेटकर चलता था। उसके घाव खुल गये थे। पैर खूब सूजे हुए थे। असह्य वेदना हो रही थी। लेकिन आत्मिक शक्ति के बल पर वह महारोगी योद्धा सत्याग्रही बना था।

एक दिन शाम को सत्याग्रही योद्धा अपनी छावनी पर लौट रहे थे। उस महारोगी सत्याग्रही के पैरों के चिथड़े रास्ते में गिर पड़े। उससे चला नहीं जा रहा था। घावों से खून बह रहा था। दूसरे सत्याग्रही तेजी से आगे बढ़ गये। महात्माजी सबसे आगे रहते थे। वे बड़े तेज चलते थे। दाण्डी-कूच के समय भी साथ के ८० सत्याग्रही पीछे-पीछे सरकते चलते थे, लेकिन महात्माजी तेजी से आगे बढ़ जाते थे। चम्पारण में भी ऐसा ही हो रहा था। पीछे छूट जानेवाले उस महारोगी सत्याग्रही का ध्यान किसी को नहीं रहा।

आश्रम पहुँचने पर प्रार्थना का समय हुआ। बापू के चारों ओर सत्याग्रही बैठे। लेकिन बापूजी को वह महारोगी दिखायी नहीं पड़ा। उन्होंने पूछताछ की। अन्त में किसी ने कहा : “वह जल्दी चल नहीं सकता था। थक जाने से वह पेड़ के नीचे बैठा था।”

गांधीजी एक शब्द भी न बोलकर उठे । हाथ में बत्ती लेकर उसे खोजने बाहर निकल पड़े। वह महारोगी राम-नाम लेते हुए एक पेड़ के नीचे परेशान बैठा था । बापू के हाथ की बत्ती दीखते ही उसके चेहरे पर आशा फूट पड़ी । भरे गले से उसने पुकारा : 'बापू।'

गांधीजी कहने लगे : "अरे, तुमसे चला नहीं गया, तो मुझसे कहना नहीं चाहिए था ?" उसके खून से सने पैरों की ओर उनका ध्यान गया । वह महारोगी था । दूसरे सत्याग्रही घृणा से पीछे हट गये । लेकिन गांधीजी ने चादर फाड़कर उसके पैर को लपेट दिया । उसे सहारा देकर धीरे-धीरे आश्रम में उसके कमरे में ले आये । बाद में उसके पैर ठीक तरह से धोये । प्रेम से उसे अपने पास बैठाया । भजन शुरू हुआ । प्रार्थना हुई । वह महारोगी भी भक्ति और प्रेम से ताली बजा रहा था । उसकी आँखें डबडबा रही थीं । उस दिन की प्रार्थना कितनी गम्भीर और कितनी भावपूर्ण रही होगी ।

ऐसे थे हमारे बापू !

२६. सेवापरायण बापू

गांधीजी जन्मजात वैद्य थे । सेवा-टहल करना उन्हें बहुत भाता था । शुरू-शुरू में रोगियों की सेवा करना उनका 'व्यसन' बन गया था । आगे चलकर उन्हें अपने आध्यात्मिक विकास के लिए यह आवश्यक लगा ।

सन् १९२० की बात है । दिसम्बर का महीना था । गांधीजी दिल्ली में वाइसराय के साथ बातचीत कर रहे थे । सत्याग्रह जारी था । हजारों सत्याग्रही जेल में थे । वाइसराय के साथ बातचीत के कई दौर चले । लेकिन समझौते के आसार नहीं दिख रहे थे ।

"यदि समझौते की सम्भावना नहीं है, तो मैं यहाँ क्यों रहूँ ? एक-दूसरे का समय व्यर्थ गँवाने से क्या लाभ ? झूठी आशा किस काम की ? बात बनती नहीं है तो खुले तौर पर जनता से कह दें ।" – गांधीजी ने वाइसराय से कहा ।

वाइसराय ने पूछा : "यह सच है कि सच्ची स्थिति जनता के सामने रख देना हिम्मत का काम है। आप फिर सेवाग्राम कब जायेंगे ?"

बापू ने कहा : "हो सका तो आज ही शाम को जाऊँगा। निश्चित ही मैं आपके अधीन हूँ। आपको मेरी जरूरत हो तो मैं रह सकता हूँ, जरूरत न हो, तो मुझे सेवाग्राम जाने दीजिये। मेरा दिल वहाँ है। वहाँ कई तो बीमार हैं। उनमें से बहुत सारे मेरे साथी हैं। मेरा सारा सुख उनके पास रहने में है। सेवाग्राम जाने के लिए मैं अधीर हूँ ?"

२७. बापू धोबी बने

दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह चल रहा था। सैकड़ों सत्याग्रही जेल में थे। उनके परिवार की व्यवस्था टॉल्स्टॉय फार्म में की गयी थी। कई बहनें अपने बाल-बच्चों को लेकर वहाँ रहती थीं। गांधीजी को जब भी फुरसत मिलती, इन बहनों को सान्त्वना दिया करते थे। उनका काम भी कर देते थे।

एक दिन गांधीजी कपड़ा धोने निकले। अलग-अलग बहनों के पास गये और बोले : "धोने के कपड़े दो बहन ! मैं धोकर ला दूँगा। नदी जरा दूर है। आपके बच्चे छोटे हैं। टट्टी-पेशाब से सने सारे कपड़े दे दो। दूसरे भी दो। शरमाओं नहीं। तुम्हारे पति वहाँ सत्य के लिए जेल में तपस्या कर रहे हैं। तुम्हारी फिक्र हमें करनी चाहिए। लाओ। सचमुच दो।"

संकोचशील माँ-बहनें ये शब्द सुनकर कपड़े निकालकर देती थीं। उन कपड़ों की काफी मोटी गठरी बाँधकर, पीठ पर लादकर वह राष्ट्रपिता नदी ले जाता था। वहाँ सारे कपड़े ढंग से धोकर, धूप में सुखाकर, तह करके ला देते थे। ऐसे थे बापू ! उनकी सेवा की सीमा नहीं थी।

२८ दरिद्रनारायण का उपासक

अदन की बात है । गांधीजी ने यहीं से अपने साथ का बहुत-सा सामान भारत लौटा दिया था । बम्बई से जहाज के खुलते ही गांधीजी सामान देखने लगे । कितना सारा सामान था !

बापू ने पूछा : "महादेव, इन बक्सों में क्या है ? इतना सामान क्यों जमा हो गया ?"

"विलायत में ठण्ड अधिक है । इसलिए कइयों ने कपड़े दिये हैं । कम्बल हैं, गरम कपड़े हैं । 'ना' कैसे कहा जाय ? यह एक कश्मीरी शाल है ।" महादेवभाई बड़ी अजिजी से कहने लगे।

"हम इतने सारे कपड़े लेकर कैसे जायँ ? हम दरिद्रनारायण के प्रतिनिधि रूप में जा रहे हैं न ? ये कपड़े-लत्ते देखकर हमें कौन गरीब कहेगा ? मुझे तो कपड़ों की आवश्यकता नहीं है । बहुत ठण्ड लगती हो तो कम्बल काफी है । तुम्हें जो बहुत जरूरी हो, वही रखो । बाकी सब लौटा दो । अब अदन आयेगा ।

महादेवभाई ने अदन में वह सारा बोझ उतार दिया । वहाँ के मित्रों से कहा : "यह भारत लौटा देना।" कमर पर पंछिया पहनकर दरिद्रनारायण का प्रतिनिधि उस साम्राज्य की राजधानी के लिए रवाना हुआ, जहाँ सूर्य कभी अस्त न होता था ।

२९. बे-घर बापू

सन् १९३३-३४ की बात है । गांधीजी का अस्पृश्यता-निवारण सम्बन्धी दौरा चल रहा था। उड़ीसा का प्रवास अभी-अभी पूरा हुआ था । उस प्रवास में कई दफा पैदल भी घूमना पड़ा था । बापू पैदल जाते थे । पैदल घूमना उन्हें बहुत प्रिय था । उड़ीसा से आन्ध्र में आये । यात्रा शुरू हुई । सत्यधर्म की अमर वाणी देशवासियों को सुनाई देने लगी । जगह-जगह खूब भीड़ होती थी । गाँवों से लाखों लोग आते थे और महात्मा के दर्शन करते थे ।

यह कौन आया है ? “महात्माजी से मुझे मिलने दो” – कह रहा है । कौन है यह ? कया काम है इसे ? वह कया कोई सनातनी है ? क्या शास्त्रार्थ करने आया है ? लेकिन उसके चेहरे पर शास्त्रार्थ की वृत्ति नहीं है । निगाहें कुछ और ही हैं ।

पूछा गया : “आपको क्या काम है ?”

“क्षणमात्र के लिए मुझे उनसे मिलने दीजिये । मैं एक उपहार लाया हूँ । वह महात्माजी के हाथों में मुझे देने दीजिये । 'ना' नहीं कीजिये ।” उस व्यक्ति की पलकें भींगने लगीं । गांधीजी के पास उसे ले जाया गया । एक खादी के रूमाल में लपेटकर वह गांधीजी का एक चित्र लाया था । बड़ा सुन्दर चित्र था । वह एक चित्रकार था । महात्मा का चित्र बनाकर उसने अपनी तूलिका को पवित्र किया था ।

“महात्माजी, यह आपका चित्र मैंने बनाया है । उपहार स्वीकार कीजिये ।” चरण-कमलों में प्रणाम करते हुए वह बोला ।

गांधीजी ने चित्र हाथ में लिया । देखा । वापस चित्रकार के हाथ में देते हुए उन्होंने कहा : “मैं इसे कहाँ ले जाऊँ ? मेरे पास न कोई घर है, न द्वार । बोझा क्यों बढ़ाऊँ ? सामान क्यों बढ़ाऊँ ? कहाँ लगाऊँ यह चित्र ? कहाँ रखूँ ? अब तो इस देह का बोझ भी बुरा लग रहा है । भाई इसे अपने ही पास रख लो ।”

सब गम्भीर हो गये । गांधीजी के उद्गार सुनकर मुझे तुकाराम के शब्द याद आते हैं :

उद्योगाची धाव बैसली आसनों

पडलें नारायणीं मोटले हें ।

अब बस कर यह दौड़-धुप । देह की गठरी अब नारायण के चरणों में पड़ जाय, तो काफी है ।

३०. मसहरी कितनों को मिलती है ?

आश्रम में मच्छर बहुत परेशान करते थे । गांधीजी को ठीक नींद नहीं आती थी । किसी से कहा : "इन मच्छरों का क्या किया जाय ? रात में बड़ी तकलीफ होती है ।"

उस मित्र ने सुझाया : "आप मसहरी लगा लीजिये, बड़ा आसान उपाय है ।"

गांधीजी सोचने लगे । फिर बोले : "मसहरीवाला उपाय मैं जानता हूँ । लेकिन हिन्दुस्तान में कितने लोग मसहरी लगा सकते हैं ? जहाँ खाने को एक रोटी नहीं मिलती, वहाँ मसहरी कौन लगा सकता है ? ठण्ड और गरमी से लाखों लोग देश में मर रहे हैं । लाखों गाँवों में गरीब लोग गरमी का त्रास भोगते हैं । क्या यह उपाय उन सबके लिए सुलभ है ? सम्भव है ?"

आगे जाकर किसी ने बापू से कहा कि मिट्टी का तेल बदन पर लगाकर सोयें, तो मच्छर पास नहीं आते । बापू को खुशी हुई और फिर मिट्टी का तेल बदन पर चिपुड़कर सोने लगे ।

३१. फिजूलखर्ची का भय

गांधीजी छोटी-से-छोटी बात का भी बहुत ध्यान रखते थे । उनका सत्य का प्रयोग हर जगह चलता था । गोलमेज-परिषद् के समय की बात है । भोजन के वक्त वे थोड़ा-सा शहद लेते थे । उस दिन गांधीजी का जहाँ भोजन था, वहाँ मीराबहन हमेशा की शहद की बोतल साथ ले जाना भूल गयीं । खाने का समय होने लगा । मीराबहन को शहद की याद आयी । बीतल तो निवास पर छूट गयी । अब ? उन्होंने फौरन किसी को पास की दूकान तक दौड़ाया और शहद की नयी बोतल मँगवा ली ।

गांधीजी भोजन करने बैठे । शहद परोसा गया । उनका ध्यान उस बोतल पर गया ।

उन्होंने पूछा : "बोतल नयी दीखती है । शहद की वह बोतल नहीं दिखायी देती ।"

"हाँ, बापू ! वह बोतल निवास पर छूट गयी । इसलिए यहाँ जल्दी में यह मँगा ली ।" मीराबहन ने डरते-डरते कहा ।

कुछ देर गम्भीर रहने के बाद गांधीजी ने कहा : "एक दिन शहद न मिला होता, तो मैं भूखा थोड़े ही रह जाता । नयी बोतल क्यों मँगायी ? हम जनता के पैसे पर जीते हैं । जनता के पैसे की फिजूलखर्ची नहीं होनी चाहिए ।"

३२. कुर्ता क्यों नहीं पहनते ?

गांधीजी की हरएक बात हेतुपूर्वक होती थी । उनके कपड़ों का फर्क देखने लगें तो उनके जीवन की क्रान्ति समझ में आयेगी । जब वे बैरिस्टर थे, तब एकदम यूरोपियन पोशाक थी । बाद में वह गयी । अफ्रीका में सत्याग्रही पोशाक थी । भारत लौटे, तब काठियावाड़ी पगड़ी, धोती पहनते थे । लेकिन जब देखा कि एक पगड़ी में कई टोपियाँ बन सकती हैं, तब टोपी पहनने लगे । इसी टोपी को हम गांधी टोपी कहते हैं । फिर कुर्ता और टोपी का भी त्याग किया, केवल एक पंछिया पहनकर ही वह महापुरुष रहने लगा । यह पंछिया पहनकर ही वे लन्दन में सम्राट् पंचम जार्ज से मिलने राजमहल गये । इससे चर्चिल साहब नाराज हो गये थे । महात्माजी की आत्मा गरीब-से-गरीब लोगों से एकरूप होने के लिए छटपटाती रहती थी ।

एक बार गांधीजी एक स्कूल देखने गये । हँसी-मजाक चल रहा था । एक लड़का कुछ बोला । शिक्षक ने उसकी तरफ गुस्से से देखा । गांधीजी उस बच्चे के पास गये और बोले : "तूने मुझे बुलाया? क्या कहना है तुझे ? बोलो, डरो मत।"

"आपने कुर्ता क्यों नहीं पहना ? मैं अपनी माँ से कहूँ क्या ? वह कुर्ता सी देगी । आप पहनेंगे न ? मेरी माँ के हाथ का कुर्ता आप पहनेंगे ?"

“जरूर पहनूँगा । लेकिन एक शर्त है बेटा ! मैं कोई अकेला नहीं हूँ ।"

“तब और कितने चाहिए ? माँ दो सी देगी ।”

“बेटा, मेरे ४० करोड़ भाई-बहन हैं । ४० करोड़ लोगों के बदन पर कपड़ा आयेगा, तब मेरे लिए भी कुर्ता चलेगा । तुम्हारी माँ ४० करोड़ कुर्ते सी देगी ?”

महात्माजी ने बच्चे की पीठ थपथपायी । वे चले गये । गुरुजी और छात्र अपनी आँखों के सामने राष्ट्र के दरिद्रनारायण को देखकर स्तम्भित हो गये । महात्माजी राष्ट्र के साथ एकरूप हुए थे । वे राष्ट्र की माता थे !

खण्ड – ४

सत्याग्रही

३३. गहरा आघात

सन् १९३३-३४ के बीच का समय था । अस्पृश्यता-निवारण के हेतु महात्माजी का उपवास समाप्त हुआ था । उपवास के बाद बापूजी ने देशभर में प्रवास किया । वह महापुरुष सब जगह यह कहता फिरा कि अस्पृश्यता मिटाओ, मन्दिर और घर के द्वार खोल दो । महापुरुष धर्म को बार-बार निर्मल रूप देते रहते हैं । महात्माजी उस समय उस समस्या के साथ मानो तन्मय हो गये थे । अस्पृश्यों को उन्होंने 'हरिजन' नाम दिया । मानो वे कहने लगे कि वे हरि के जन हैं, प्रभु के प्यारे हैं । क्योंकि जिसे मनुष्य दूर करता है, उसे ईश्वर अपनाता है ।

उन दिनों गांधीजी को ऐसे ही सपने आते थे कि हरिजनों के लिए अमुक मन्दिर खुल गया, अमुक कुँआ खुल गया आदि । असल में उन्हें गहरी नींद आती थी । लेकिन उनके मन में हमेशा अस्पृश्यता-निवारण ही बसा हुआ था । एक ही चिन्ता लगी थी ।

प्रवास करते-करते उड़ीसा आये । प्रसिद्ध सप्त पुरियों में से एक जगन्नाथपुरी इसी प्रान्त में है । देशभर के यात्री यहाँ आते हैं । वहाँ नौ बड़े-बड़े हण्डों में प्रसाद चढ़ता है । जगन्नाथ का प्रसिद्ध रथ कौन नहीं जानता ? कई ऐसे भी श्रद्धालु हो गये हैं, जिन्होंने मोक्ष पाने की आशा से इस रथ के नीचे आकर शरीर त्यागा है । जगन्नाथपुरी के पास समुद्र भी अति सुन्दर है । नीला, गम्भीर सागर ! यहीं तो बंगाल के महान् भक्त चैतन्य महाप्रभु समुद्र देखकर देह की सुध-बुध खो बेठे थे । वह नीला-नीला सागर देखकर चैतन्य को लगा कि सामने साक्षात् भगवान् कृष्ण ही हैं । और वे उसमें घुस गये । उस जगन्नाथपुरी में बापू आये ।

महात्माजी ने अस्पृश्यता-निवारण के सम्बन्ध में यह सन्देश दिया : “धर्म तो सबको जोड़नेवाला होता है । यदि हम अपने ही भाई-बहनों को दूर रखते हैं, तो ईश्वर भी दूर रह जायेगा

। किसी को नीच न मानिये । सब प्रभु की सन्तान हैं । भेद करना पाप है । अस्पृश्यता रहती है तो सच्चा धर्म नहीं रहेगा । स्वराज्य भी नहीं होगा ।"

महात्माजी के साथ कस्तूरबा थीं, महादेवभाई थे । सायंकालीन सभा हुई । प्रार्थना हुई । महात्माजी आराम कर रहे थे । कस्तूरबा को जगन्नाथ के दर्शन करने की इच्छा हुई । वे महादेवभाई से बोलीं :

"तुम चलोगे मेरे साथ ? – चलो, हम प्रभु के दर्शन कर आये । वह पावन मन्दिर देख आयें।"

महादेवभाई कस्तूरबा के साथ गये । दोनों मन्दिर गये । कस्तूरबा प्रभु के आगे काफी देर खड़ी रहीं । दोनों लौट आये । महात्माजी को मालूम हुआ कि महादेव और कस्तूरबा दोनों मन्दिर गये हैं । महात्माजी बेचैन हुए । उन्हें कुछ सूझता ही नहीं था । दिल धड़कने लगा । बहुत अस्वस्थ हो गये ।

इतने में कस्तूरबा आयीं, महादेवभाई आये ।

"तुम लोग मन्दिर कैसे गये ? मैं अपने को हरिजन-अस्पृश्य मानता हूँ । जहाँ हरिजनों को मनाही है, वहाँ हम कैसे जा सकते हैं ? मैं औरों को माफ कर देता, लेकिन तुम लोग तो मुझसे एक-रूप हो गये हो । तुम्हीं लोग मन्दिर हो आये । जहाँ हरिजन जा नहीं सकते, वहाँ हो आये । छि: ! मैं यह कैसे सहन करूँ ? अपनी वेदना किससे कहूँ ? तुम लोग मन्दिर गये, तो मानो मैं ही गया । क्योंकि मेरे साथ के लोगों को देखकर ही मेरी भी परीक्षा की जाती है ।"

बापू से बोला नहीं जा रहा था । जोर से दिल धड़क रहा था । नाड़ी तेज चलने लगी । महादेवभाई परेशान हुए । महात्माजी के तो मानो प्राण गले में अटकने लगे । कस्तूरबा और महादेवभाई को यह कल्पना नहीं थी कि परिणाम इतना भयानक होगा । लेकिन अब कया हो ? डॉक्टर दौड़-धूप करने लगे । कस्तूरबा प्रार्थना करने बैठीं । महादेवभाई की जबान बन्द हो गयी।

धीरे-धीरे महात्माजी का मन शान्त हुआ । नाड़ी ठीक हुई । दिल की धड़कन कम हुई । वे शान्त पड़े हुए थे । अनर्थ टल गया । जीवदान मिला । महादेवभाई लिखते हैं : "सन्तों की सेवा करना, उनके साथ रहना बहुत कठिन है । कब क्या हो जाय, कोई ठिकाना नहीं है ।"

महात्माजी कई मामलों में बड़े भावुक थे ।

३४. भूल का अनोखा प्रायश्चित

नागपुर के आसपास अस्पृश्यता-निवारण सम्बन्धी दौरा हो रहा था । एक दिन क्या हुआ? महात्माजी का हाथ पोंछनेवाला रूमाल काम की भीड़ में कहीं पिछले पड़ाव पर छूट गया । शायद सूखने के लिए फैलाया था, वहीं रह गया । महात्माजी को रुमाल की जरुरत पड़ी । महादेवभाई से माँगा । उन्होंने कहा : "खोज लाता हूँ ।" महादेवभाई ने बहुत खोजा । रूमाल मिला नहीं । बापू से कैसे कहा जाय कि रूमाल खो गया ? आखिर महादेवभाई ने आकर कहा :

"बापू, रूमाल पीछे छूट गया । शायद कहीं खो गया । मैं दूसरा ला देता हूँ ।" बापू कुछ देर तक बोले नहीं । फिर पूछा :

"वह कितने दिन तक चलता ?"

"चार महीने और चलता ।"

"तो फिर मैं चार महीने बिना रुमाल के ही चलाऊँगा । भूल का यह प्रायश्चित है । बाद में दूसरा रुमाल लेंगे ।"

महादेवभाई क्या बोलते ?

३५. बापू की उदारता

श्री घनश्यामदास बिड़ला और गांधीजी में बड़ा आत्मीय सम्बन्ध था । बिड़लाजी ने 'बापू' नामक एक पुस्तक भी लिखी है । एक बार बिड़लाजी बीमार थे । बापू ने उन्हें लिखा : "सेवाग्राम आइये । इलाज करूँगा।" राजेन्द्रबाबू, सरदार, नरेन्द्रदेव आदि न जाने कितने लोगों की सेवा उन्होंने सेवाग्राम में की और उनके इलाज का प्रबन्ध किया । सबके प्रति उनका समभाव था । बड़े नेता हों, पूँजीपति हों, छोटा बच्चा हो और चाहे किसी पक्ष का हो । सबसे वे प्रेम करते थे । चाहे राजमहल हो, चाहे झोपड़ी, सूर्य की किरणें सब जगह समान रूप से पहुँचती हैं ।

महात्माजी बिड़लाजी को बुलाते थे, लेकिन बिड़लाजी संकोच करते थे । सेवाग्राम में भंगी नहीं है । सारे आश्रम के ही लोग भंगी-काम करते हैं । और बिड़लाजी जहाँ रहनेवाले थे, उस जगह की सफाई और वहाँ के आरोग्य की जिम्मेदारी महादेवभाई पर आनेवाली थी । बिड़लाजी को भंगी-काम पसन्द नहीं था । और उनकी पखाना-सफाई महादेवभाई करें, यह बात उन्हें सहन नहीं होती थी । इसलिए वे सेवाग्राम आते नहीं थे ।

लेकिन गांधीजी से उनका पाला पड़ा ।

बापू ने कहा : "आइये तो एक बार सेवाग्राम । आपको ठीक कर दूँगा । अपना इलाज शुरू करूँगा ।"

बिड़लाजी ने अपनी अड़चन बतायी। महादेवभाई को हँसी आयी । गांधीजी भी हँसे । लेकिन गांधीजी किसी पर कोई बात लादते नहीं थे । दूसरों की भावना को पहचानते थे और उसकी कद्र करते थे । बापू ने कहा : आप आइये, आपके लिए कुछ दिन तक एक भंगी रखा जायेगा ।"

तब बिड़लाजी आये । कुछ दिन के लिए एक विशेष भंगी का प्रबन्ध किया गया था । ऐसे थे सबको निभानेवाले बापू !

३६. भूल कबूलने की हिम्मत

सन् १९२१ में ही बारडोली का आन्दोलन होनेवाला था । लेकिन वह हुआ १९२८ में । भला १९२१ में क्यों नहीं हुआ ? तैयारी तो हो गयी थी । देशव्यापी सत्याग्रह शुरू करने से पहले महात्माजी एक तहसील में प्रयोग करनेवाले थे । वहाँ स्वराज्य की घोषणा करनेवाले थे । यह निश्चय करनेवाले थे कि सरकार की हम नहीं मानेंगे । इसके लिए उन्होंने बारडोली तहसील को पसन्द किया था । देशभर में बिजली जैसा वातावरण था । ब्रिटिश हुकूमत को न मानने का सामुदायिक प्रयोग !

देशबन्धु चितरंजन दास जेल में थे । स्वयंसेवकों का संगठन गैर-कानूनी करार दिया गया था । हजारों युवक जेल में थे । चन्द्रशेखर आजाद को जानते हो न ? वही, जो इलाहाबाद के बगीचे में पुलिस के साथ लड़ते-लड़ते शहीद हुए थे ! यह सन् १९२१ की बात है । वह केवल १५ साल का युवक था । लेकिन उसे तब कोड़े लगाये गये । वह बालक चन्द्रशेखर प्रत्येक कोड़े पर 'महात्मा गांधी की जय' गरजता था ! ऐसा वह सन् १९२१ का वर्ष था ।

लेकिन जहाँ देशभर में बिजली का-सा वातावरण था, वहाँ युक्तप्रान्त (उत्तर प्रदेश) के चौरीचौरा नामक स्थान पर दंगे हुए । पुलिस वगैरह को जला दिया गया । लोग प्रक्षुब्ध थे और महात्माजी व्यथित । गांधीजी विशेष आग्रह के साथ कहते थे कि बारडोली का आन्दोलन यदि सफल करना है तो सारे देश को शान्त रहना चाहिए, कहीं कोई अत्याचार नहीं होना चाहिए । बारडोली- आन्दोलन के विषय में उन्होंने वाइसराय को पत्र लिखा था । लेकिन चौरीचौरा की खबर मिली । गांधीजी ने आन्दोलन स्थगित कर दिया । 'चौरीचौरा' खतरे का संकेत है । देश

शान्त नहीं रह सकता । मुझे आन्दोलन छेड़ना नहीं चाहिए । इस आशय का एक लेख गांधीजी ने लिखा । वह एक कठोर आत्मपरीक्षण था, राष्ट्र-परीक्षण था । विद्युन्मय राष्ट्र गांधीजी का निर्णय सुनकर हताश हुआ । 'केशरी' पत्र ने अपने अग्रलेख में लिखा : 'बारडोली का वार खाली गया ।' किसी ने कहा कि देश का तेजोभंग करना पाप है । देशबन्धु जेल के अन्दर गुस्से से लाल हो गये । उन्होंने इसे गांधीजी की भयंकर भूल कहा । लेकिन वह महापुरुष शान्त रहा । गांधीजी अविचलित रहे ।

एक बार किसी ने गांधीजी से पूछा : "आपके जीवन में सबसे महत्त्व का दिन कौन-सा है? कौन-सा दिन आपको बड़ा लगता है ?" उन्होंने जवाब दिया : "सारे राष्ट्र के विरोध के बावजूद बारडोली का आन्दोलन जिस दिन मैंने स्थगित किया, उस दिन को मैं बड़ा मानता हूँ । पीछे हटने का वह दिवस, लेकिन वह सत्याग्रही की दृष्टि से विजय-दिवस था । वह अहिंसा की जीत थी ।"

लोगों को वह दिन पराजय का दिन दीखता था, वही महात्माजी को विजय का दिन लगा।

३७. वज्र से कठोर

सन् १९२६ की बात है । गांधीजी साबरमती-आश्रम में रहते थे । और भारत के महान् सेवक दीनबन्धु एण्ड्रूज भी उस समय वहीं थे । दीनबन्धु का हृदय वास्तव में दया-सिन्धु था । दूसरों का दुःख देखते ही उनकी आँखें भर आती थीं । गांधीजी भी प्रेमसागर थे, लेकिन समय आने पर वे कर्तव्य-निष्ठुर हो जाते थे । कभी-कभी तो कठोरता के साथ किये गये इन्कार में ही अपार करुणा होती है ।

एक बार मलाबार को ओर का एक कांग्रेस कमेटी का मन्त्री बापूजी के पास आया । उसकी कहानी बड़ी करुणाजनक थी । उसने सार्वजनिक कोष से बहुत-सा धन लोकसेवा में ही खर्च किया । लेकिन हिसाब न रखने के कारण सारा जमा-खर्च ठीक से पेश नहीं कर सकता था

। हजार-एक रुपयों की बात थी । उसने अपने लिए तो एक भी पैसा खर्च किया नहीं था । लेकिन स्थानीय कार्यकारिणी समिति के लोगों ने कहा : "जमा-खर्च पेश करो, वरना पैसे भरो ।"

"इतनी रकम कहाँ से दूँ ?"

"हम क्या बतायें ? सार्वजनिक पैसे का हिसाब ठीक-ठीक रहना चाहिए ।"

"बापूजी के पास जाता हूँ । वे कह दें, तब तो मानेंगे ?"

"हाँ, मान लेंगे ।"

वह मन्त्री बापूजी के पास पहुँचा । गांधीजी के सामने सारी हकीकत रखी । उसने कहा : "बापू, मैं स्कूल की नौकरी छोड़कर सेवा के लिए अपने को समर्पित कर चुका हूँ । मैंने एक पैसा भी अपने लिए काम में नहीं लिया है ।"

"यह सच हो सकता है । लेकिन आपको पैसे भरने चाहिए । सार्वजनिक काम में व्यवस्थितता जरूरी है ।"

"लेकिन अब क्या हो ?"

"पैसा भरना ही एक उपाय है ।"

वह युवक रोने लगा । पास ही दीनबन्धु थे । वे दुखी हुए । बोले : "बापू, जो पछता रहा है, उससे इतनी कठोरता से क्यों बोलते हैं ?"

बापू ने कहा : "पश्चात्ताप केवल मन में होने से क्या लाभ ? दोष का परिमार्जन हो, तो ही कहा जा सकेगा कि वास्तविक पश्चात्ताप हुआ । यह कुछ नहीं । इस युवक को अपनी भूल सुधारनी चाहिए । जनसेवक है यह ।"

३८. वचन-पालन

महापुरुष सत्यव्रती होते हैं। जो वचन दिया, उसे पालते ही हैं । इसीलिए रामचन्द्र को हम 'एक बात बोलनेवाला' कहते हैं ।

'रघुकुल रीति सदा चलि आई । प्रान जाय बरु बचनु न जाई ।'

ऐसी थी रघुकुल की महिमा । श्री रामकृष्ण परमहंस मुँह से जो शब्द निकलता, उसे सत्य ही मानते थे । कोई कहता कि 'दूध लीजिये' और इनके मुँह से यदि 'नहीं' निकल पड़ता, तो परमहंस दूध लेते नहीं थे । जो शब्द उच्चारित हुआ, उसे कैसे झुठलायें? उसे व्यर्थ कैसे होने दें? महापुरुष ऐसी तीव्रता से सत्य की उपासना करते हैं ।

गांधीजी भी ऐसा ही कहते थे । कलकत्ते का मासिक 'मॉडर्न रिव्यू' विश्वविख्यात पत्र है । उसके सम्पादक रामानन्द चटर्जी अब संसार में नहीं हैं । उनके जीवन-काल की यह घटना है । सन् १९३० की बात हे । श्री रामानन्दजी ने मासिक पत्र के लिए गांधीजी से कुछ लिखने को कहा था ।

गांधीजी ने कहा : "मुझे समय कहाँ मिलता है ?"

"चार ही पंक्ति भेजियेगा ।"

"ठीक है । कभी भिजवा दूँगा ।"

गांधीजी के सिर पर सम्पूर्ण राष्ट्र का भार था । लाहौर की कांग्रेस हुई । स्वतंत्रता का प्रस्ताव पास हुआ । गांधीजी ने वाइसराय के सामने ग्यारह माँगें रखीं, जो काफी प्रसिद्ध हैं । सरकार ने इन्कार किया । गांधीजी इस विचार में व्यस्त थे कि स्वतंत्रता का देशव्यापी आन्दोलन शुरू किया जाय । उन्हें 'नमक' नजर आया । तय हुआ कि 'नमक-कानून' को भंग किया जाय । वे आश्रम से निकल पड़े । पैदल-यात्रा, मुलाकातें, प्रार्थना-सभा वगैरह खूब काम रहते थे । लेकिन उस बीच भी गांधीजी कहा करते थे कि : 'मॉडर्न रिव्यू' के लिए लेख भेजना तय किया है, कब समय

निकालुँ?' रोज उन्हें अपने वचन का स्मरण होता था । आखिर एक दिन एक छोटा-सा लेख उस राष्ट्रपुरुष ने लिख भेजा ।

उस लेख का बड़ा अजीब हाल हुआ । वह छोटा-सा लेख उस पत्रिका-कार्यालय में जाने कहाँ धरा रह गया । श्री रामानन्दजी का दुबारा पत्र आया । महात्माजी ने पत्र में लिखा : "लेख भेज दिया गया है ।" खोजबीन हुई, आखिर रद्दी की टोकरी में लेख पड़ा मिला । वह अमूल्य रचना मिल गयी । श्री रामानन्दजी ने महात्माजी को पत्र लिखकर क्षमायाचना की ।

३९. सफाई : ज्ञान का पहला पाठ

गांधीजी अफ्रीका के सत्याग्रह में सफलता प्राप्त कर हिन्दुस्तान लौट आये थे । अपने गुरु श्री गोखले के कथनानुसार वे समूचे देश में घूम रहे थे । युक्तप्रान्त (उत्तर प्रदेश) में घूमते समय बिहार के कुछ लोग उनसे मिले । बिहार के चम्पारण में गोरे जमींदारों ने भारी जुल्म मचा रखा था । बिहार के शिष्ट-मण्डल के लोगों ने कहा :

"गांधीजी, आप आइये, हमें रास्ता दिखाइये ।"

गांधीजी बोले : "मैं जरूर आऊँगा । लेकिन आप लोगों को मेरी बात माननी होगी ।"

उन्होंने स्वीकार किया : "जैसा आप कहेंगे, हम वैसा ही करेंगे ।"

"जेल जाने की तैयारी रखेंगे ?"

"जी, हाँ ।"

बात तय हो गयी और कुछ दिनों बाद चम्पारण के सत्याग्रह के लिए वे दौड़ पड़े । श्री राजेन्द्रबाबू वगैरह बिहार के सत्याग्रही लोग उसी समय पहले-पहल गांधीजी से मिले । किसानों का काम तो शुरू हुआ, लेकिन गांधीजी को सारी जनता के अन्दर चेतना जगानी थी ।

कई साथी स्वयंसेवकों से उन्होंने कहा कि "आप लोग देहातों में जायँ और किसानों के बच्चों के लिए स्कूल चलायें ।' कस्तूरबा भी चम्पारण गयी थीं । एक दिन गांधीजी ने उनसे कहा : "तुम क्यों कोई स्कूल नहीं शुरू करती ? किसानों के बच्चों के पास जाओ, उन्हें पढ़ाओ ।"

कस्तूरबा बोलीं : "मैं क्या सिखाऊँ ? उन्हें क्या मैं गुजराती सिखाऊँ ? अभी मुझे बिहार की हिन्दी आती भी तो नहीं ।"

"बात यह नहीं है । बच्चों का प्राथमिक शिक्षण तो सफाई का है । किसानों के बच्चों को इकट्ठा करो । उनके दाँत देखो । आँखें देखो । उन्हें नहलाओ । इस तरह उन्हें सफाई का पहला पाठ तो सिखा सकोगी । माँ के लिए यह सब करना कठिन थोड़े ही है । यह सब करते-करते उनके साथ बातचीत करोगी, तो वे भी तुमसे बोलेंगे । उनकी भाषा तुम्हारी समझ में आने लगेगी और आगे जाकर तुम उन्हें ज्ञान भी दे सकोगी । लेकिन सफाई का पाठ तो कल से ही उन्हें देना शुरू करो ।"

कस्तूरबा अगले दिन से वही करने लगीं, बालगोपालों की सेवा का असीम आनन्द लूटने लगीं ।

गांधीजी सफाई को ज्ञान का प्रारम्भ मानते थे ।

४०. बुद्ध का अवतार

हमारा देश एक बड़ा अजयाबघर है । यहाँ संस्कृति की प्रत्येक श्रेणी के नमूने दिखायी देते हैं । जिस गाँव में ज्ञानस्वरूप परमात्मा की उपासना करनेवाला संन्यासी होगा, उसी गाँव में मुर्गी और बकरी की बलि चढ़ानेवाले लोग भी मिलेंगे । गाँव में माता निकलीं तो वे बकरी का जुलूस निकालकर उसे जिन्दा ही गाड़ देते हैं । इस तरह बकरी को गाड़ने से कहीं हैजा दूर होगा ? माता तो स्वच्छता रखने से दूर होती है । हम लोग अज्ञान और रूढ़ियों के शिकार हैं ।

जुलूस देवी के मन्दिर के पास आया । महात्माजी उस बकरी के साथ थे । उन्होंने पूछा :

“बकरी किसलिए बलि चढ़ायी जा रही है ?"

“इसलिए कि देवी प्रसन्न हो ।"

“बकरी से आदमी श्रेष्ठ है । मनुष्य की बलि देने से देवी अधिक प्रसन्न होगी । देखो, क्या ऐसा कोई आदमी तैयार है ? नहीं तो मैं तैयार हूँ ।”

किसी से बोल निकल नहीं रहे थे । सब गूँगे हो गये थे । बापू बोले : “गूँगे जानवर के खून से क्या देवी प्रसन्न होती है ? यदि वह प्रसन्न होती हो तो अपना अधिक मूल्यवान रक्त दो । वह क्यों नहीं देते ? यह तो धोखा है, अधर्म है ।”

“आप हमें धर्म समझाइये ।”

“सत्य पर चलो । प्राणिमात्र पर प्रेम करो । वह बकरी छोड़ दो । आज यह जगदम्बा आप लोगों पर जितनी प्रसन्न हुई होगी, उतनी इससे पहले कभी न हुई होगी ।”

सब लोग लौट गये । भगवान् बुद्ध ने २६०० वर्ष पहले एक यज्ञमण्डल में जो किया था, वही महात्माजी ने १९१६-१७ में किया । महात्माजी प्रेम की प्रतिमूर्ति थे ।

४१. चरखे के व्यामोहक डर

गांधीजी को हमेशा यही चिन्ता रहती थी कि देश के दरिद्रनारायण को पेटभर अन्न कैसे मिले । इस देश में करोड़ों लोग बेकार हैं । उन्हें घर में ही कोई रोजगार दें, तो क्या दें ? विचार करते-करते उन्हें चरखा भगवान् के दर्शन हुए । उनके भतीजे श्री मगनलालभाई ने सब जगह घूम-घामकर गांधीजी को चरखा ला दिया । गांधीजी का पक्का विश्वास था कि देश में फिर एक बार चरखे की घर्र-घर्र सभी जगह शुरू हुए बिना निस्तार नहीं है । उससे लोगों को तत्काल रोटी

दे सकते हैं, कभी आना-दो आना दे सकते हैं । वर्षा की बूँद पड़ते ही सारी धरती हरी हो जाती है, उसी तरह चरखे से थोड़ा-थोड़ा मिलता जाय, तो भी घर में कुछ राहत मिल सकती है। यही सब वे सोचते थे । तब चरखा और खादी का प्रचार शुरू हुआ । उड़ीसा में इतनी गरीबी है कि सचमुच जब चरखे से दो पैसे मिलने लगें तो लोगों की आँखें कृतज्ञता से भर आयीं । चरखे ने देश में कहाँ-कहाँ कितनी आशा की ज्योति जगायी है, हमें पता नहीं चलता । चरखे के और भी उपयोग हैं ही । हमारे कातने से श्रम की प्रतिष्ठा बढ़ती है । हम श्रम करनेवालों से एकरूप होते हैं । मन में निर्मलता आती है । एकाग्रता आती है । एक प्रकार का प्रशान्त आनन्द महसूस होने लगता है ।

कर्नाटक के हुबली गाँव में गांधी सेवा संघ का अधिवेशन था । उसमें गांधीजी बोले : “मैंने अपने भगवान् का नाम चरखा रखा है ।” गहरा उद्गार था । भारी श्रद्धा थी । ईश्वर के अनन्त नाम हैं । चरखा खाना देता है, सहारा देता है, स्वाभिमान सिखाता है । इसलिए चरखा ईश्वर है, आश्रयदाता है । और गांधीजी उस ईश्वर के महान् उपासक थे ।

एक बार बोलते-बोलते गांधीजी ने कहा : “मैं कहीं इस चरखे की आसक्ति में फँस तो नहीं जाऊंगा ? कहीं ऐसा न हो ज़ाय कि मरते समय राम-नाम के बजाय मुँह से चरखे का नाम निकल जाय ।”

पास में ही जमनालालजी बजाज बैठे थे । बोले : “बापू, आप चिन्ता न कीजिये । चरखे की फिक्र छोड़ दीजिये । उसे जनता मरने नहीं देगी ।"

गांधीजी का स्मरण कर हम रोज कुछ कात लें तो कितना अच्छा हो । पूज्य विनोबाजी ने कहा : “महात्माजी की मूर्ति खादी में है ।” सच है न ?

४२. दुर्बलता का लाभ उठाना पाप है

पिछली बार जब गांधीजी आगाखाँ-महल में थे, तब उनके साथ उनके परिवार के लोग भी थे। सरोजिनी नायडू भी थीं। आगाखाँ-महल के चारों ओर एक बड़ा मैदान था। वहीं बापू शाम के समय घूमते थे। शुरू के कुछ दिन सुबह-शाम इस मैदान में घूमना ही इन लोगों का मनोरंजन था।

कुछ दिनों बाद सरकार ने उस मैदान में इन लोगों के खेलने की सुविधा कर दी। इन लोगों को बैडमिंटन बहुत पसन्द था। खासकर सरोजिनीदेवी को वह खेल बहुत प्रिय था।

खेल के सामान आये। खेल का खास स्थान छील-छालकर साफ किया गया। सारी तैयारी होने के बाद सरोजिनीदेवी खेलने के लिए मैदान में उतरीं। गांधीजी हमेशा के अपने व्रत ज्यों के त्यों चला रहे थे। महल के बरामदे में सूत कातते हुए बैठे थे। उनकी दृष्टि सरोजिनीदेवी की तरफ गयी। उन्होंने ने कहा :

"क्यों सरोजिनी ! अकेली खेलोगी ? मुझे साथ में लोगी ?"

वे बोलीं : "बापू, मुझे क्या, चाहे जब आपको ले सकती हूँ। लेकिन आप खेलना जानते तो हैं न ?"

बापू ने कहा : "वाह ! उसमें कौन-सी बड़ी बात है ? तुम जैसा खेलोगी, वह देखकर मैं भी खेलूँगा।" यह कहकर बापू सचमुच खेलने नीचे उतर आये। जिसे हमेशा यह फिक्र हो कि अपने पीछे राष्ट्र में क्या हो रहा है, वह महापुरुष खेलने आया। हो सकता है कि पिछले दिन ही इस राजनैतिक महापुरुष ने वाइसराय को कोई महत्त्वपूर्ण पत्र लिखा हो, लेकिन अब वह सारी चिन्ता, व्यवहार सब भूलकर खेल में रमने लगा।

ज्यों ही बापू आये, सरोजिनीदेवी खेलने के लिए गेंद उठाकर आयीं तो देखती हैं, बापू बायें हाथ में रैकेट लिये खेलने की मुद्रा में खड़े हैं। सरोजिनीदेवी खूब हँसने लगीं और बोलीं : "बापू, आप यह भी नहीं जानते कि रैकेट किस हाथ में पकड़ना है, और चले हैं खेलने ?"

बापू ने कहा : "मेरा क्या दोष ? तुमने बायें हाथ में रैकेट लिया है, तो मैंने भी लिया । तुम जैसा करोगी, वैसा ही मैं करूँगा ?"

तब जाकर सरोजिनीदेवी के ध्यान में बात आयी । वे बोलीं : "मेरा दाहिना हाथ दुखता है, इसलिए मैं बायें हाथ से खेलती हूँ । आप तो दायें हाथ से खेलिये ।"

महात्माजी ने हाथ बदल लिया । गेंद इधर से उधर उड़ने लगी । इतने में सरोजिनीदेवी ने खेल रोका । पूछा : "यह क्या बापू ? फिर बायें हाथ से खेलने लगे ?"

सचमुच बापू फिर बायें हाथ से खेल रहे थे । बोले :

"जी हाँ ! मैं तो बायें हाथ से ही खेलूँगा । वरना मैं जीत जाऊं तो तुम कहोगी कि दायें हाथ से खेलते रहे, इसलिए जीते ।"

गांधीजी का विनोद सुनकर खेल देखने के लिए एकत्र सारे लोग हँसने लगे । फिर खेल शुरू हुआ ।

राष्ट्र की और मानवता की चिन्ता ढोनेवाला महापुरुष अनेक बार खेल और विनोद में भी लीन हो जाता था । ७५ वर्ष के इस बूढ़े में २५ वर्ष के युवक जैसा खेलने का उत्साह अकसर दिखायी देता था ।

४३. नमक ही अलोना हो जाय तो ?

गांधीजी लिये हुए व्रत को कभी तोड़ते नहीं थे । उनके परिवार के लोगों से उन्हें ऐसा ही संस्कार मिला था । गांधीजी ने अनेक प्रकार के व्रत लिये थे । लेकिन सूत-कताई के व्रत के प्रति उनका विशेष प्रेम था। चाहे जितना काम हो, बड़े- बड़े लोगों की मुलाकातें हों, कांग्रेस की बैठक

हो, चर्चा हो, लेकिन वे प्रतिदिन नियत समय पर सूत काते बगैर नहीं रहते थे । यही व्रत आश्रम के अनेक व्यक्ति पालते थे ।

एक बार गांधीजी प्रवास पर थे । प्रवास खूब लम्बा था । साथ में और लोग भी थे । समय मिलते ही गांधीजी ने अपना चरखा खोला । यह क्या ? उसमें पूनी ही नहीं! पूनी रखना ही वे भूल गये थे । उन्होंने महादेवभाई को आवाज दी और कहा : "अरे महादेव, मैं सेवाग्राम से रवाना होते समय पूनी लेना भूल गया । अपने पास से थोड़ी पूनियाँ दोगे ?"'

महादेवभाई से काफी देर तक बोला नहीं गया । गांधीजी ने फिर कहा : "दोगे न, महादेव?"

तब महादेवभाई बोले : "बापू, मैं रोज कातता हूँ, लेकिन आज चरखा ही लाना भूल गया।"

महादेवभाई सिर नीचा किये खड़े रहे । बापू की आँखों से आँख मिलाने की हिम्मत नहीं होती थी । फिर गांधीजी ने दूसरे किसी से पूनी माँगी तो उससे भी वही जवाब मिला ।

गांधीजी गम्भीर हो गये । अन्तर्मुख हुए । कुछ गम्भीर विचार में लीन हो गये । लगे हाथों 'हरिजन' के अगले अंक में उन्होंने एक लेख प्रकाशित किया । उसमें उन्होंने लिखा था : "नमक ही अपना खारापन छोड़ दे तो उसका यह अलोनापन कौन मिटाये ? वास्तव में जो सूत-कताई का प्रसार करनेवाले हैं, वे ही अपने व्रत की तरफ दुर्लक्ष्य करें, तो उन्हें व्रत-पालन करना कौन सिखाये ?"

साधारण लोगों में यह हिम्मत नहीं होती कि अपने दोषों को स्वीकार कर लें । लेकिन गांधीजी अपनी भूलों को फौरन संसार के सामने खोलकर रख देते थे । उनका मानना था कि यह आत्मशुद्धि का एक उपाय है ।

उन्होंने अपने एक लेख में लिखा था : "यदि मनुष्य को अपनी भूल स्वीकार करने में शरम आती है, तो वैसी भूल करने में सौगुना शरम होनी चाहिए ।"

४४. गुण-दर्शन का नमूना

बापूजी सफाई के परम भक्त थे । सफाई परमेश्वर का रूप है । हमारे देश को अभी यह सीखना बाकी है कि सफाई ईश्वर है । घर में तो हम सफाई रखते हैं । लेकिन सार्वजनिक सफाई का हमें अभी भान नहीं है । गांधीजी का सारा जीवन ही अन्तर्बाह्य शुचिर्भूत और निर्मल था । उनका वह छोटा-सा पंछिया था, फिर भी वह कितना साफ रहता था ।

उन दिनों गांधीजी यरवदा जेल में थे । उन्होंने अपने लिए खास काम माँग रखा था । वे कपड़े सीते थे । गांधीजी तो महान् कर्मयोगी थे । एकदिन जेल के प्रमुख अधिकारी उनके पास गये । गांधीजी जहाँ बैठकर सूत कातते थे, वहाँ तक वे सज्जन जूता पहनकर चले गये । गांधीजी से कुशल-क्षेम पूछी । बापू ने भी प्रसन्न मुख से उत्तर दिया । कुछ देर में वे अधिकारी चले गये । तब गांधीजी उठे और बाल्टीभर पानी लाये । सुपरिटेण्डेण्ट जहाँ तक जूता पहनकर आया था, वहाँ तक सारा धोया, लिपाई की, साफ कर दिया ।

किसी ने पूछा : “बापू, यह क्या कर रहे हैं ?”

“यह मेरे उठने-बैठने का स्थान है । क्या उसे साफ न रखूँ ?”

“किसने गन्दा किया ?”

“सुपरिटेण्डेण्ट आये थे । आज वे बोलते-बोलते यहाँ तक आये । जूते पहने यहाँ तक चले आये । इसलिए साफ कर रहा हूँ ।”

“आपने उनसे क्यों नहीं कहा ? यहाँ एक पटिया लगा दीजिये कि जूते बाहर ही उतारकर आयें ।”

“नहीं, यह तो हरएक के समझने की बात है । जाने दो । बहुत दिनों के बाद आज लिपाई की । ऐसा अवसर मुझे कौन देगा ? सुपरिटेण्डेण्ट के प्रति आभार मानना चाहिए कि उन्होंने मुझे ऐसे सत्कार्य का अवसर दिया, मेरे हाथों सफाई की सेवा हुई ।”

यह कहकर बापू हँसते-हँसते हाथ धोने लगे ।

४५. सादगी और साबुन

गांधीजी हमेशा कहते थे : "मैं सबसे अधिक लोकतंत्र का उपभोक्ता हूँ ।" सचमुच वे वैसे ही थे । वे कभी किसी पर कुछ लादते नहीं थे । साबरमती-आश्रम में छोटे बच्चों के साथ के व्यवहारों में भी उनकी यह वृत्ति दीखती थी । उन दिनों काकासाहब का बच्चा 'बाल' आश्रम में ही था । बाल और उसके साथियों को साबुन की जरूरत पड़ी । कपड़े मैले थे ।

संचालक ने कहा : "बापूजी की स्वीकृति लो । फिर साबुन के लिए पैसे मिलेंगे ।"

वे बाल वीर बापू के पास गये ।

"बापू, आप मंजूरी दीजिये ।"

गांधीजी समझाने लगे : "हमें तो गरीबी से रहना है । किसान का जीवन जीना है । किसान क्या रोज कपड़ों में साबुन लगाता है ? यह अच्छा नहीं दिखेगा ।"

"क्या किसान को गन्दा रहना है ? स्वराज्य में हम ऐसा करेंगे कि हरएक किसान को साबुन मिले । काम से घर लौटने पर उसे भी साफ कपड़े पहनने चाहिए । बापू, सफाई का मतलब क्या शान-शौकत है ? सफाई क्या ऐश है ? साबुन तो एक आवश्यक चीज है । आप हमें मंजूरी दीजिये ।"

"मान लो, मैंने मंजूरी दे दी । लेकिन आश्रम के सब लोगों को यह पसन्द न आया तो ? तुम लोग एक काम करो । अपने अनुकूल बहुमत प्राप्त करो । समर्थन में हस्ताक्षर लाओ, जाओ ।"

"वह हमारा काम है" कहकर 'बाल' कूदने लगा । और उन बालवीरों ने आश्रमवासियों के खूब सारे हस्ताक्षर प्राप्त किये । सबको ही साबुन चाहिए था । 'ना' कौन करता ? यानी क्या

गांधीजी से ये लोग डरते थे ? लेकिन बच्चों ने निर्भय वातावरण बनाया । वे हस्ताक्षर लेकर गांधीजी के पास गये ।

"बापूजी, लीजिये ये हस्ताक्षर" विजयी वीरों ने कहा ।

"साबुन मंजूर" बापू हँसते हुए बोले ।

४६. गफलत खतरनाक है

मीराबहन को हिन्दुस्तान आये अधिक दिन नहीं हुए थे । गांधीजी की तालीम में वे शिक्षित हो रही थीं । वे दिल्ली में डॉ. अन्सारी के यहाँ गयी । मुसलमानों के आतिथ्य की सीमा नहीं रहती । मीराबहन को पान का बीड़ा दिया गया ।

उन्होंने 'ना' कहा ।

"पान खाने में क्या बुराई है ? पान तो भारतीय सत्कार का चिह्न है । वह आरोग्य की दृष्टि से भी अच्छा है ।" डॉक्टर पान की महिमा गाने लगे ।

उन्हें बुरा न लगे, इसलिए मीराबहन ने पान खा लिया । लेकिन उन्हें लगा कि यह ठीक नहीं किया । उन्होंने यह बात बापू को लिख दी । यह भी पूछा कि कहीं भूल तो नहीं हुई ? भूल हुई तो क्षमा करें, यह भी लिख दिया ।

गांधीजी ने निम्न आशय का उत्तर दिया :

"डॉक्टर साहब का ऐसा आग्रह करना ठीक नहीं था । साधक के लिए अनावश्यक वस्तुओं का स्वीकार करना उचित नहीं है । मुसलमान लोग पान देना सभ्यता और प्रेमपूर्ण सत्कार का चिह्न मानते हैं । लेकिन जीवन में पान की खास जरूरत नहीं है । साधक को तो कदम-कदम पर सजग रहना चाहिए । कोई पीछे पड़ जाय, तो भी अपना व्रत छोड़ना नहीं चाहिए । ऐसी छोटी-

छोटी बातों में दृढ़ न रहने से आगे जाकर वह व्यसन ही बन जाता है और फिर बड़ी बातों में भी फिसलने का भय रहता है ।"

गांधीजी अपने निकटवर्ती लोगों के जीवन को कितनी मेहनत से आकार देते थे।

४७. नम्रता ने ही चकमा दिया

यह कहानी सन् १९२४ की है, जबकि गांधीजी आगाखाँ-महल में थे ।

बापूजी जेल में भी अपना समय व्यर्थ नहीं गँवाते थे । वाचन, लेखन, प्रार्थना, कताई सब काम बराबर चलते थे । बीच में ही कभी कोई नयी भाषा सीखते थे, किसी नये ग्रंथ का परिचय कर लेते थे । इस तरह चलता था । जवाहरलालजी, मौलाना आजाद, राजेन्द्रबाबू आदि सारे नेता भी जेलवास का इसी तरह लाभ उठा लेते थे । जवाहरलालजी ने तो अपने सारे बड़े-बड़े ग्रंथ जेल में ही लिखे हैं ।

उस दिन गांधीजी का जन्म-दिन था । आन्दोलन के उन दिनों में जेल के बाहर सारे देश में जनता बड़ी गम्भीरता के साथ वह दिन मनाती थी । उधर सरोजिनीदेवी, डॉ. सुशीला नैयर आदि ने एक नया शिगूफा खिलाया । वे बोलीं : "बापू, आज सारे काम बन्द ! आज आपका जन्म-दिवस है ।"

बापू ने कहा : "सारा दिन काम बन्द नहीं रखना है । केवल दोपहर के समय कुछ देर बन्द रहे ।"

तय हो गया । दोपहर को गांधीजी के परिवार के लोगों ने नया ही खेल शुरू किया ।

निश्चय हुआ कि संसार के महान् विचारकों के भाषण और लेख लिये जायँ और बारी-बारी से प्रत्येक व्यक्ति उन विचारकों का नाम पहचाने । दूसरों की बारी समाप्त हुई । गांधीजी की बारी

आयी । उन्हें कुछ उद्धरण सुनाये गये और सब बापू से कह उठे : “बापू, पहचानिये तो, ये किनकी उक्तियाँ हैं ?”

बापू ने कुछ देर सोचकर कहा : “पहली थोरो की है, दूसरी रोमां रोलां की और तीसरी इमर्सन की या कार्लाईल की है ।”

सब चिल्ला उठे : “गलत, बिलकुल गलत !”

फिर उनमें से एक ने कहा : “बापू, ये सारे उद्धरण एक ही व्यक्ति के हैं और उस व्यक्ति का नाम है मोहनदास करमचन्द गांधी !”

बापू हँस पड़े । सब हँसने लगे । अनजाने ही गांधीजी ने अपने को महान् विचारकों की श्रेणी में बैठा दिया था ।

यों तो नम्रता आड़े आ जाती, लेकिन उस दिन नम्रता ने ही गांधीजी को चकमा दे दिया था।

खण्ड - ५

ज्योति-पुरुष

४८. शोषण का पाप

सन् १९३१ में कराची में कांग्रेस का अधिवेशन हुआ । सन् १९३० का 'नमक सत्याग्रह' समाप्त हो गया था । सरकार के साथ संघर्ष में हिन्दुस्तान की जीत हुई थी । संसार में हिन्दुस्तान की प्रतिष्ठा बढ़ी थी । वाइसराय ने गांधीजी से समझौता किया था और महात्माजी गोलमेज परिषद् के लिए लन्दन जानेवाले थे । कराची-कांग्रेस ने उन्हें अपना एक मात्र प्रतिनिधि चुना था । गांधीजी विलायत के लिए रवाना हुए । वही कपड़े, वही सादगी ! साथी लोगों ने खूब कपड़े लिये थे । लेकिन गांधीजी ने वे सब कपड़े अदन से लौटा दिये । बोले : "मैं दरिद्रनारायण का प्रतिनिधि हूँ ।" पंचा पहना हुआ यह योगिराज, महान् नेता, ईसा का अवतार लन्दन पहुँचा । वहाँ गांधीजी मजदूरों की बस्ती में ठहरे । उन्हें न तो जाड़े ने दुःख दिया; न बर्फ ने परेशान किया । वहाँ वे बच्चों के बड़े प्यारे हो गये । उन्हीं के साथ घूमते, हँसते, खेलते रहे ।

गोलमेज परिषद् का काम चालू था । चर्चा और व्याख्यान रोज होते थे । लेकिन जिन्ना साहब कुछ भी चलने नहीं देते थे । गांधीजी को गोलमेज परिषद् के अलावा और भी कई जगह जाना पड़ता था । भेंट, मुलाकात, प्रश्नोत्तर, पत्रकार-परिषद् जैसे कुछ-न-कुछ काम लगे ही रहते थे ।

ऐसी ही एक सभा थी । महात्माजी बोले । उन्होंने वर्णन किया कि ब्रिटिश शासन में हिन्दुस्तान का किस प्रकार सर्वतोमुखी पतन हुआ है । भारत की भयंकर गरीबी का उन्होंने करुण गम्भीर चित्र खड़ा किया । सभा स्तब्ध थी। बीच ही में एक व्यक्ति ने उठकर प्रश्न किया :

"गांधीजी, यह ठीक है कि ब्रिटिश पूंजीवादी लोग सत्ता के आधार पर हिन्दुस्तानी जनता का शोषण कर रहे हैं, लेकिन क्या आपके देश के ही मिल-मालिक, जमींदार, मालिक-वर्ग जनता का खून नहीं चूस रहे हैं ? आपके पूंजीपति लोग क्या पापी नहीं हैं ?"

महात्माजी बोले :

"देशी पूँजीपति भी पापी हैं, लेकिन उनके पाप का मूल आप लोगों में है । यदि मैं हिंसावादी होता और गरीबों को चूसनेवाले अपने देश के पूँजीपतियों को दो गोली मारता, तो ब्रिटिशों को चार गोली मारता । भारत के अन्दर आप लोगों का पाप बहुत ज्यादा है । सौ-डेढ़ सौ वर्षों की लूट! पहाड़ के बराबर पाप ! अब बताइये कि भारतीय पूँजीवादी पाप का प्रारम्भ कहाँ से हुआ ?"

ऐसा तेजस्वी उत्तर गांधीजी ने दिया । गांधीजी निर्भय थे, नि:स्पृह थे । जिसके पास सत्य का अधार होता है, वही इस तरह की बात कह सकता है ।

४९. बापू की छटपटाहट

बापू की करुणाजनक मृत्यु से कुछ ही पहले की बात है । मीराबहन दिल्ली आयी हुई थीं । मीराबहन हिमालय की तराइयों में (ऋषिकेश के पास) एक गाँव में गोशाला चला रही हैं । गाय-बैलों के मल-मूत्र का कृषि में बढ़िया उपयोग कर रही हैं । इंग्लैण्ड के एक जल सेना-अधिकारी की वे पुत्री हैं । भारत की जनता की सेवा में अपने को समर्पित करने के निश्चय से वे भारत आयीं। महात्माजी के तत्त्वज्ञान की वे बेजोड़ उपासक बनी । वे साधक मनोवृत्तिवाली बहन हैं। विवेकानन्द के साथ जैसी भगिनी निवेदिता थीं, वैसी गांधीजी के साथ मीराबहन थीं ।

मीराबहन ने गांधीजी से कहा : "बापू, एक बार ऋषिकेश आइये न ? मेरे लिए न सही, अपने प्रिय गायों के लिए तो आइये । कितनी सुन्दर गायें हैं ?"

बापू बोले : "मैं इस समय मृतवत् हूँ । मुझे क्यों बुलाती हो ?"

देशभर में साम्प्रदायिक खूनखराबी हो रही थी । मैं कह रहा हूँ, लेकिन मेरी कौन सुनता है, मैं अपने को अकेला महसूस कर रहा हूँ । यह कत्लेआम देखने के बजाय मर जाना अच्छा, ऐसा उनको लगता था । लेकिन मीराबहन की करुणामय और दुखी मुद्रा देखकर बापू फिर गम्भीरता से बोले :

"मैं मरने के बाद सबमें अधिक एकरूप हो जाऊँगा । शरीर का बन्धन टूट जायेगा, आत्मा मुक्त हो जायेगी । सबमें मिल जाऊँगा । ठीक है न ?"

५०. प्रेम बनाम आदर

गांधीजी स्वतंत्रता के हिमायती थे । लादा गया धर्म उन्हें पसन्द नहीं था । हमेशा कहते थे, मैं लोकतंत्र का सबसे बड़ा उपासक हूँ । वास्तविक प्रेम स्वतंत्रता देनेवाला होता है । सच्चा प्रेम कभी किसी को गुलाम नहीं बनाता । परमेश्वर का प्रेम इस तरह निरपेक्ष होता है । आप ठीक व्यवहार करेंगे, इस आशा से वह सूर्य, चन्द्र, तारे, बादल, फूल सब देता ही जाता है । महापुरुष ऐसे ही होते हैं ।

सन् १९३३-३४ में अस्पृश्यता निवारण का प्रवास मध्यप्रान्त से शुरू हुआ था । महान् देशभक्त बै. अभ्यंकर महात्माजी के साथ उन्हीं की मोटरगाड़ी में पूरे मध्यप्रान्त के प्रवास में रहे । बै. अभ्यंकर स्पष्ट वक्ता थे । उनकी भक्ति निर्भय ही थी । सच्चा प्रेम निर्भय ही होता है । जहाँ भय है, संकोच है, वहाँ प्रेम कैसा ? बै. अभ्यंकर ने गांधीजी से मोटर में जाते-जाते कहा : "आपके साथ प्रवास करना बड़ा कठिन है, दिक्कत का काम है ।"

"क्यों, क्या हुआ?" गांधीजी ने हँसते-हँसते पूछा ।

"आपके साथ सिगरेट पी नहीं पाता । आपके सामने कैसे पी जाय? अपमान जो होगा ।" अभ्यंकर ने कहा ।

गांधीजी ने खुले दिल से कहा : “आप पी सकते हैं । सच, आप पीजिये ।”

गांधीजी ने अनुमति दी । लेकिन महात्माजी के साथ जब तक वे घूमते रहे, तब तक एक भी सिगरेट उन्होंने नहीं पी ।

५१. माँ की सिखावन

संसार में एकदम निर्दोष वस्तु क्या है ? सर्वत्र भले-बुरे का मिश्रण है । हमें भलाई ही देखनी चाहिए । और बुराई के प्रति दुर्लक्ष्य करना चाहिए । गांधीजी के पास तीन बन्दरोंवाला एक खिलौना था । एक बन्दर अपने हाथ से कान बन्द किये हुए था, दूसरा मुँह बन्द किये हुए था और तीसरा आँख बन्द किये हुए था । उन बन्दरों का कहना है कि बुरा न सुनो, बुना न बोलो, बुरा न देखो । महात्माजी का यह आदर्श था ।

एक बार सरदार पटेल सेवाग्राम आये हुए थे । उन्होंने बापूजी से पूछा : “अखबारों में लिखा है कि लॉर्ड लिनलिथगो ने अपने भाषण की एक प्रति आपके पास पहले ही भेजी थी । उन्होंने वह क्यों भेजी थी ? क्या इसलिए कि आप कोई सुझाव दें या रद्दोबदल सुझायें ?”

गांधीजी ने कहा : “लिनलिथगो का वह भाषण तो झूठी बातों की गठरी है । उसमें रद्दोबदल करना या कोई सुझाव देना सम्भव ही नहीं है । वह भाषण एकदम फेंक देने योग्य हे।”

सरदार हँसते हुए बोले : “लेकिन सब देवताओं को खुश रखने का आपका ठाठ ही कुछ और है ।” फिर बोले : “आपने जिस लेख में वाइसराय के बारे में दो-एक अच्छे शब्द इस्तेमाल किये हैं, उसी लेख में जयप्रकाश और समाजवाद के बारे में भी आपने अच्छे उद्‌गार व्यक्त किये हैं ।"

गांधीजी हँसते हुए बोले : “हाँ, यह तो सच है, यह मेरी माताजी की सिखावन है । वह मुझे वैष्णव मन्दिरों में भी जाने को कहती, शिवजी के मन्दिर में भी जाने को कहती । और मजे की

बात कहूँ ? जब मेरा विवाह हुआ, तब हम दोनों को उसने पूजा करने के लिए केवल सभी हिन्दू मन्दिरों में ही भेजा, सो नहीं, बल्कि दरगाह को भी ले गयी थी ।"

५२. पवित्र मनुष्य

सरदार वल्लभभाई की गांधीजी के प्रति अत्यन्त भक्ति और प्रेम था । सन् १९३५ में उनको भी गांधीजी के साथ यरवदा जेल में रखा गया था । गांधीजी की तरह वे भी खाने-पीने लगे । वे चाय ले नहीं पाते थे । खजूर खाने लगे ।

बापू से पूछते : "बापू, कितने खजूर लूँ ?"

बापू कहते : "पन्द्रह ।"

"बीस लें तो क्या हर्ज है ? पन्द्रह और बीस में कौन बड़ा फर्क है ?"

"तो फिर दस ही काफी हैं । दस और पन्द्रह में ही कितना फर्क है ?" यह कहकर गांधीजी मुक्त हँसी हँसते । गांधीजी की सेवा करने का सरदार को बड़ा शौक था । लेकिन गांधीजी स्नान करके आते, तभी कपड़े भी धोकर लाते थे ! वह सेवा भी सरदार को मिलती नहीं थी । रात को सरदार उनके चरणों में मस्तक नवाकर ही सोने जाते ।

सन् १९३२ में जाति पर आधारित चुनाव-पद्धति बदलने के लिए अस्पृश्यों को सवर्णों से अलग न कर देने के लिए गांधीजी ने जेल में आमरण अनशन शुरू किया । राजाजी को यरवदा लाया गया । राजाजी ने सरदार से कहा : "आप गांधीजी को उपवास न करने को कहिये ।"

सरदार बोले : "उनसे बढ़कर अधिक पवित्र मनुष्य मैंने कहीं देखा नहीं । उन्हें मैं क्या बताऊँ ? उनके लिए उनका अन्तर्यामी ही प्रमाण है ।"

सरदार गांधीजी से कई बार कहते : “हम साथ-साथ ही मरें । अपने पीछे मुझे छोड़ न देना।” लेकिन बापू गये । सरदार को दुःख निगलकर सहयोगियों के साथ देश की गाड़ी को संकट से आगे ले जाना पड़ा।

५३. श्रद्धा का परिणाम

ईश्वर पर श्रद्धा एक जीवित तथ्य है । सन्त तुकाराम ने कहा : “प्राण भले ही जायँ, निष्ठा नहीं डिगनी चाहिए ।”

‘तुका म्हणे व्हावी प्राणांसवें ताटी ।

नाहीं तरी गोष्टी बोलूं नये ॥’

ईश्वर के बारे में, श्रद्धा के बारे में व्यर्थ क्यों बोलते हो ? अगर यहाँ तक तैयारी है कि प्राण छूट जायँ तो भी चिन्ता नहीं, तब ऐसी बातें बोलो । तुकाराम के ये शब्द सच्चे हैं ।

ईश्वर पर गांधीजी की निष्ठा ऐसी ही थी । वही तारनेवाला है, वही मारनेवाला है । साबरमती का आश्रम हाल ही में शुरू हुआ था । उन्होंने कहा कि अगर कोई हरिजन आ सके तो उसे भी आश्रम में लेंगे । एक हरिजन परिवार आया । महात्माजी ने उसे लिया । अहमदाबाद के सनातनी लोग क्षुब्ध हुए । व्यापारी लोग धर्म के मामले में बड़े कट्टर होते हैं । अब आश्रम की सहायता कौन करेगा?

मगनलालभाई गांधीजी के भतीजे थे । वे आश्रम की व्यवस्था देखते थे । दक्षिण अफ्रीका से गांधीजी की साधना में समरस हुए थे । गांधीजी उन्हें अपना दायाँ हाथ मानते थे । गांधीजी को चरखा चाहिए था, तो मगनलालभाई ने गुजरातभर छान मारा । सूत कातनेवाली एक बहन दिखी तो वे खुशी से पागल हो गये । चरखा मिल गया, ऐसे थे मगनलालभाई । उन्होंने एक दिन शाम

की प्रार्थना के बाद बापूजी से कहा : “बापू, कल आश्रम में खाने को कुछ नहीं है । पैसा तो बचे नहीं । क्या किया जाय ?”

बापू ने शान्ति से कहा : “चिन्ता न करो । ईश्वर को चिन्ता है । उसने कहा, **‘योगक्षेमं वहाम्यहम्’** ।”

उसी दिन रात को कोई व्यापारी आया । उसने आश्रम देखा और दस हजार रुपये देकर चला गया ।

एक बार किसी ने गांधीजी से पूछा : “आप अपना बीमा क्यों नहीं करवाते ?” उन्होंने कहा: “इसलिए कि ईश्वर पर श्रद्धा है ।”

५४. ध्येय-निष्ठा और अलिप्तता

सन् १९०८ की बात है । लोकमान्य तिलक को छह वर्ष की कालेपानी की सजा हुई थी, और उधर अफ्रीका में गांधीजी भी जेल में थे । जोहान्सबर्ग की जेल में दूसरे कैदियों के बीच ही उन्हें रखा गया था । जिस दिन पहली बार उन्हें कोठरी में रखा गया, उस दिन उनके दिल में आँधी थी । उस कोठरी में शराबी, डाकू, चोर आदि नाना प्रकार के कैदी थे । वे चाहे जो बकते थे, चुहलबाजी करते थे । गांधीजी रातभर जागते रहे । वह रात वे कभी भूले नहीं ।

धीरे-धीरे उनकी वृत्ति शान्त हुई । बदन पर कैदी के कपड़े थे । कड़ी सजा हुई थी । उन्हें पत्थर फोड़ने का काम दिया गया था । एक दिन पत्थर फोड़ते-फोड़ते उनके हाथ से खून बहने लगा ।

साथी सत्याग्रहियों ने कहा : “बापूजी, काम बन्द कीजिये । अँगुलियों से खून बह रहा है।"

बापू ने कहा : जब तक हाथ काम करता रहेगा, तब तक करते रहना मेरा कर्तव्य है ।” और वह महान् सत्याग्रही पत्थर फोड़ता ही रहा ।

जेल में रहते समय एक बार उन्हें कोई गवाही देने के लिए अदालत ले जाया गया। कोई मित्र अदालत आये हुए थे। "मैं आनन्द में हूँ" इतना ही वे बोले। काम समाप्त होते ही पुलिस के पहरे में वे चल पड़े। यूरोपियन बच्चे गांधीजी पर प्रेम करते थे। वे सब पीछे-पीछे आ रहे थे। लेकिन बापूजी ने एक बार भी पीछे मुड़कर नहीं देखा। ध्येय-सिद्धि के लिए जो महान् यज्ञ प्रज्ज्वलित करना था, उस ओर उनकी दृष्टि थी। महात्माओं के मन के भाव कौन समझ सकता है ?

५५. 'श्रद्धा चाहिए'

मैं बड़ों से हमेशा दूर रहता हूँ। सूर्य से दूर रहकर धूप ली जाय और अपने जीवन का विकास किया जाय, यही हमारा प्रयत्न हो, ऐसी मेरी वृत्ति है। नासिक जेल में श्री प्यारेलालजी ने मुझसे कहा : "छूटने पर आप गांधीजी से मिलिये। जमनालालजी मिलायेंगे।"

मैंने कहा : "मैं नहीं जाऊँगा। अपना रोना लेकर कहीं जाने की मेरी इच्छा नहीं है।"

मैं जेल से छूटकर अमलनेर आया। जमनालालजी का पत्र आया : "आप आइये। महात्माजी से आपकी मुलाकात का समय निश्चित करूँगा।"

मैंने लिखा : "क्षमस्व। मैं नहों आ सकता।"

बाद में कुछ दिन तक मैं एक गाँव में रहा था। गांधीजी अमलनेर होते हुए वर्धा की ओर जानेवाले थे। हम स्टेशन पर उनके लिए तथा उनके साथियों के लिए खाना-पीना ले गये। गाड़ी के छूटने का समय हो रहा था। किसी ने मुझे गाड़ी में ढकेल दिया। दो स्टेशन तक स्वयंसेवक साथ जानेवाले थे। गांधीजी और उनके साथी गाड़ी में भोजन करनेवाले थे और फिर वे बर्तन लेकर स्वयंसेवक लौटती गाड़ी से आनेवाले थे। मैं जानेवाला नहीं था। लेकिन ढकेल दिया गया तो जाना ही पड़ा।

मुझसे कहा गया : "आपको दो मिनट का समय दिया गया है । गांधीजी के पास जाइये।"

मैं नम्रता के साथ गांधीजी के सामने जा बैठा । प्रणाम किया । उनके लिए हमने आम का रस दिया । वह पीकर वे बर्तन धोने निकले । मैंने आगे जाकर कहा : "मैं धो दूँगा ।" इशारे से उन्होंने मना किया । हाथ-मुँह पोंछकर गांधीजी बैठे । मुझे कुछ पूछना नहीं था । मुझे किसी तरह की शंका नहीं थी । आखिर मुश्किल से मैंने कहा : "में एक गाँव में रहता हूँ । लेकिन मुझे समाधान नहीं है । लोगों को मेरे प्रवचनों की आवश्यकता नहीं है । मैं उनकी आर्थिक स्थिति कैसे सुधारूँ?"

"गाँव की सफाई किये जाओ ।"

"वह तो हम करते हैं ।"

"तब ठीक है । लोगों की सेहत सुधरेगी । उससे वे ज्यादा दिन काम करेंगे । इससे उनकी आर्थिक स्थिति कुछ सुधरेगी । दवा में पैसे खर्च नहीं होंगे । घर के लोगों का समय नष्ट नहीं होगा । निराश होने से काम नहीं चलता । सेवक में श्रद्धा चाहिए । दस साल में भी अगर हमें एक समानधर्मी मिले, तो भी बहुत हुआ, ऐसा मानना चाहिए ।"

दो मिनट समाप्त हुए । मैं प्रणाम कर फौरन् उठ आया । 'श्रद्धा चाहिए' ये उनके शब्द आज भी कानों में गूँज रहे हैं ।

५६. अन्धविश्वास पर कुल्हाड़ी

सन् १९३० का अप्रैल का महीना । दाण्डी कूच पूरा हो गया था । गांधीजी ने नमक का सत्याग्रह किया था । अब वे सिन्दी (खजूर) का पेड़ काटने का सत्याग्रह कर रहे थे । कराडी नामक गाँव में पड़ाव था । वह देख रहे हो न छोटी-सी झोपड़ी ? उसी में गांधीजी रहते थे ।

एक दिन प्रातःकाल अनोखा ही ढंग देखने में आया । गाँवावालों ने बड़ा जुलूस निकाला । जुलूस में स्त्रियाँ भी थीं । वे सबसे आगे थीं । सामने राष्ट्रध्वज था । बाजे बज रहे थे । यह कैसा

जुलूस है ? ये सारे लोग क्या सत्याग्रह करने जा रहे थे ? पुरुषों के हाथ में फल, फूल, पैसे हैं । यह सब क्या है ?"

गांधीजी झोपड़ी से बाहर निकले । लगातार जयजयकार होने लगी । उन सबने भक्तिपूर्वक प्रणाम कर अपना उपहार गांधीजी के चरणों में समर्पित किया ।

बापूजी ने पूछा : "कैसे आये ? यह बाजा किसलिए ?"

उनके नेता ने कहा : "महात्माजी, हमारे गाँव में हमेशा पानी का अकाल रहता है । गरमी के दिन आये कि कुएँ सूख जाते हैं । पानी की बड़ी कठिनाई होती है । लेकिन आश्चर्य है बापू, हमारे गाँव में आपके चरण पड़ते ही सारे कुओं में पानी भर आया। फिर हमारे हृदय भक्तिभाव से क्यों न भर जायँ ?"

"तुम लोग पागल हो । मेरे आने का और इस पानी का क्या सम्बन्ध है ? ईश्वर पर मेरा अधिकार थोड़े ही है ? उसके पास आपकी वाणी का जो मूल्य है, उतना ही मेरी वाणी का है । पागलों की तरह बोलो नहीं ।" गांधीजी ने कठोरता से कहा ।

कुछ समय बीता । राष्ट्रपिता हँसे और कहा : "यह देखो, पेड़ पर कौआ बैठने और पेड़ टूटने का संयोग हो आये तो क्या यह कहोगे कि कौए ने पेड़ तोड़ दिया ? और भी कई कारण होते हैं । तुम्हारे कुएँ में पानी आया, पृथ्वी के गर्भ में कुछ भी उथल-पुथल हुई होगी और नया झरना फूटा होगा । है कि नहीं । व्यर्थ में बाल-कल्पना न करो । तुम सबके सब लोग पहले सूत कातने लगो। भारतमाता को कपड़ा चाहिए न ?"

सारी जनता प्रणाम करके गयी । हाथ में तेज धारवाली कुल्हाड़ी लेकर राष्ट्र का पिता, वह महान् सत्याग्रही सिंदी के पेड़ काटने के लिए बाहर निकल पड़ा ।

५७. मरण का आनन्द मनाओ

आज एक गम्भीर कहानी सुनाता हूँ । गांधीजी ने हर प्रकार का भय अपने जीवन से प्रयत्नपूर्वक दूर कर दिया था । वे निर्भय हो गये थे । निर्भयता ही मोक्ष है । संस्कृत में एक वाक्य है :

'आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान् न बिभेति कदाचन' इसका अर्थ बताऊँ? अर्थ यह है कि —

"ब्रह्मानन्द को जो जाने, उसे भय कहीं नहीं ।"

महात्माजी सकल चराचर में अपनी आत्मा ही देखते थे । फिर जहाँ अपनी ही आत्मा देखनी है, तब कोई किसी से डरे क्यों ? ठीक है न ?

मैं जो प्रसंग सुना रहा हूँ, वह इस प्रकार है :

रौलट कानून के खिलाफ गांधीजी ने प्रचण्ड आन्दोलन देशभर में किया । उसमें से जलियाँवाला बाग का काण्ड हुआ । उसमें से असहयोग और कानून की अवज्ञा सब बाद में होने को था । प्रवास से थके-माँदे गांधीजी आश्रम में विश्रान्ति के लिए आये थे । उस समय आश्रम छोटा था । स्थापना को ३-४ वर्ष ही हुए थे । विनोबाजी, अप्पासाहब पटवर्धन जैसे तेजस्वी, ध्येयनिष्ठ साधक आश्रम में आ गये थे । और सन् १९१९ का २ अक्टूबर का दिन आया । गांधीजी ५० वर्ष पूरे करके ५१वें में प्रवेश करनेवाले थे । आश्रमवासियों ने मिलकर एक सामान्य-सा आनन्द-समारोह करने का निश्चय किया । माला, हार, तोरण आदि से सब जगह की शोभा बढ़ा दी गयी । समारोह का समय हुआ । गांधीजी आकर बैठे । चारों ओर सत्यार्थी साथी जमा थे । मानो चन्द्र के चारों ओर तारे हों, सूर्य के चारों ओर किरणें हों, कमल के चारों ओर मधुकर हों । गांधीजी बोलने लगे । उन्होंने कहा :

"आज मेरे ५० वर्ष पूरे हुए । यानी आधा जीवन समाप्त हुआ । अब थोड़े से दिन बचे हैं । मुझे ५१वाँ वर्ष लगा है । ५० पूरे होने का आप लोग आनन्द मना रहे हैं । मेरा ५१वाँ जन्म-दिन

देखकर खुश हैं । आप लोग ईश्वर को धन्यवाद दे रहे हैं । ठीक है । और यह माला, ये हार ! मुझे इनमें विशेष रुचि नहीं है । लेकिन आप लोगों ने बड़े प्रेम से यह सब किया है । आपकी भावना को मैं समझ सकता हूँ । ठीक है । लेकिन मुझे जो बात कहनी है, वह भूलिये नहीं । आप लोग मेरा जन्म-दिन जितने आनन्द से मना रहे हैं, उतने ही आनन्द से मेरा मृत्यु-दिन भी मनाना । आज जिस प्रकार ईश्वर का आभार मान रहे हैं, उसी प्रकार उसने मुझे उठा लिया, इसके लिए भी कृतज्ञतापूर्वक उसका आभार मानना । जीवन और मरण दोनों उसी के मंगलमय वरदान हैं । अन्यथा मेरी मृत्यु के समय यदि आप लोग रोते बैठेंगे, तो यह विनोबा यहाँ जो लगातार गीता पढ़ता है, उसका क्या प्रयोजन है ?

महात्माजी ने अफ्रीका से आने के समय से ही अपने मन से मरण का भय पूरी तरह मिटा दिया था । वे सचमुच मुक्ति पुरुष थे ।

५८. राम-नाम की महिमा

अभी साबरमती का आश्रम शुरू नहीं हुआ था । कोचरब अहमदाबाद का ही एक हिस्सा था । वहाँ आश्रम था । और काशी से विनोबाजी, महात्माजी के दर्शन करने निकले । बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी का गांधीजी का वह तेजस्वी भाषण विनोबाजी ने सुना था । जो उनको चाहिए था, मानो वही उन्हें मिल गया । गांधीजी के साथ उनका पत्र- व्यवहार हुआ और फलस्वरूप वे उनके पास जा रहे थे ।

विनोबाजी आये तो उन्हें क्या दिखा? महात्माजी हँसिये से सब्जी काट रहे थे । सब्जी काटते-काटते दोनों के बीच बातचीत हुई । गीता पर और ईश्वर-श्रद्धा पर सम्भाषण चल रहा था।

महात्माजी ने कहा : “ईश्वर पर श्रद्धा रखकर जो जीता है, काम करता है, राम-नाम जिसका आध्यात्मिक आहार है, वह कभी बीमार नहीं पड़ता ।”

विनोबाजी ने कहा : “जी हाँ ।”

महात्माजी की राम-नाम सम्बन्धी श्रद्धा दिनोंदिन बढ़ती ही गयी और दिल्ली के अन्तिम उपवास में वह पराकोटि तक पहुँची थी ।

* * * * *